CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वैदिकधर्म

फरवरी १९६२

★

श्री माता जी विशेषांक

५० नये पैसे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वर्ष ४३ **वैदिक धर्म** अंक २

क्रमांक १५८ : फरवरी १९६२

संपादक

पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

विषयानुक्रमणिका

१	वैदिक-प्रार्थना		६७
२	स्वाध्याय-मण्डल वृत्त		६८
३	प्रार्थना और ध्यान	श्री माताजी	६९
४	तेरह वर्षकी बालिका	डॉ. श्रीनिवास आयंगर	७१
५	योगाश्रमकी माताजी	डॉ. श्रीनिवास आयंगर	७३
६	श्री माताजीके प्रवचन (कुछ व्यक्तिगत प्रसंग)		७७
७	प्रार्थना और अभीप्सा	श्री माताजी	८४
८	योगसाधनाका चुनाव	श्री माताजी	८६
९	व्यवस्था और अनुशासन	श्री माताजी	८८
१०	दिव्य प्रेम	श्री माताजी	९१
११	भगवान्‌के साथ पूर्ण एकत्व	श्री माताजी	९३
१२	ध्यान ही ध्यान	श्री माताजी	९६
१३	मनका बाजार	श्री माताजी	९८
१४	रुपये पैसेका मूल्य	श्री माताजी	१००
१५	देवी देवताओंकी मूर्त्तियां	श्री माताजी	१०२
१६	हमारी प्रयोगशाली	भूदत्त	१०३
१७	हमारा रंगमंच	अंजना शर्मा	१०४
१८	श्री अरविन्दाश्रम क्या है ?	श्री रवीन्द्र	१०५
१९	श्री स्वामी विवेकानन्द	—	१०७

" वैदिक धर्म "

वार्षिक मूल्य म. आ. से ५) रु.

वी. पी. से रु. ५.६२, विदेशके लिये रु. ६.५०

१

संस्कृत-पाठ-माला

(चौबीस भाग)

[संस्कृत-भाषाके अध्ययन करनेका सुगम उपाय]

इस पद्धतिकी विशेषता यह है—

भाग १-३	इनमें संस्कृतके साथ साधारण परिचय करा दिया गया है।
भाग ४	इसमें संधिविचार बताया है।
भाग ५-६	इनमें संस्कृतके साथ विशेष परिचय कराया है।
भाग ७-१०	इनमें पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसकलिंगी नामोंके रूप बनानेकी विधि बताई है।
भाग ११	इसमें " सर्वनाम " के रूप बताये हैं।
भाग १२	इसमें समासोंका विचार किया है।
भाग १३-१८	इनमें क्रियापद-विचारकी पाठविधि बताई है।
भाग १९-२४	इनमें वेदके साथ परिचय कराया है।

प्रत्येक पुस्तकका मूल्य ॥) और डा. व्य. =)

२४ पुस्तकोंका मूल्य १२) और डा. व्य. १।)

मन्त्री— स्वाध्याय-मण्डल,

पो. ' स्वाध्याय-मण्डल (पारडी) ' पारडी [जि. सूरत]

यजुर्वेदका सुबोध भाष्य

अध्याय १ श्रेष्ठतम कर्मका आदेश १॥) रु.

,, ३२ एक ईश्वरकी उपासना अर्थात् पुरुषमेध १॥) ,,

,, ३६ सच्ची शांतिका सच्चा उपाय १॥),,

,, ४० आत्मज्ञान - ईशोपनिषद् २),,

डाक व्यय अलग रहेगा।

मंत्री— स्वाध्याय-मण्डल,

पो.–' स्वाध्याय-मण्डल (पारडी) ' पारडी [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वाध्यायमण्डलके वैदिक प्रकाशन

वेदोंकी संहिताएं

'वेद' मानवधर्मके आदि और पवित्र ग्रंथ हैं। हरएक आय धर्मीको अपने संग्रहमें इन पवित्र ग्रंथोंको अवश्य रखना चाहिये।

सूक्ष्म अक्षरोंमें मुद्रित	मूल्य	डा.व्य.
१ ऋग्वेद संहिता	१०)	१)
२ यजुर्वेद (वाजसनेयि) संहिता	२)	.५०
३ सामवेद संहिता	२)	.५०
४ अथर्ववेद संहिता	६)	.७५
बडे अक्षरोंमें मुद्रित		
५ यजुर्वेद (वाजसनेयि) संहिता	४)	.५०
६ सामवेद संहिता	३)	.५०
७ यजुर्वेद काण्व संहिता	५)	.७५
८ यजुर्वेद तैत्तिरीय संहिता	१०)	१)
९ यजुर्वेद मैत्रायणी संहिता	१०)	१.२५
१० यजुर्वेद काठक संहिता	१०)	१.२५

दैवत-संहिता

एक एक देवताके मंत्रोंका अध्ययन करनेसे वेदमंत्रोंके अर्थका ज्ञान ठीक तरह तथा शीघ्र हो सकता है। इसलिये ये देवता-मंत्र-संग्रह मुद्रित किये हैं।

१ दैवत संहिता– (प्रथम भाग)

अग्नि-इन्द्र-सोम-मरुद्देवताओंके मंत्रसंग्रह।

(अनेक सूचियोंके समेत एक जिल्दमें)	११)	२)
१ अग्नि देवता मंत्रसंग्रह	६)	१)
२ इंद्र देवता मंत्रसंग्रह	७)	१)
३ सोम देवता मंत्रसंग्रह	३)	.५०
४ मरुद्देवता मंत्रसंग्रह	२)	.५)

२ दैवत संहिता– (द्वितीय भाग)

अश्विनौ-आयुर्वेद प्रकरण-रुद्र-उषा-अदिति-विश्वेदेव। इन देवताओंके मंत्रसंग्रह।

अनेक सूचियोंके साथ एक जिल्दमें)	१२)	२)
१ अश्विनौ देवता मंत्रसंग्रह	३)	.५०
२ आयुर्वेद प्रकरणम् मंत्रसंग्रह	५)	१)
३ रुद्रदेवता मंत्रसंग्रह	१.७५	.५०
४ उषा देवता मंत्रसंग्रह	१.७५	.५०
५ अदितिः आदित्याश्च मंत्रसंग्रह	३)	१)
६ विश्वेदेवाः मंत्रसंग्रह	५)	१)

३ दैवत संहिता– (तृतीय भाग)

४ उषा देवता (अर्थ तथा स्पष्टीकरणके साथ)	४)	.५०
५ अश्विनौ देवताका मंत्रसंग्रह (अर्थ तथा स्पष्टीकरणके साथ)	४)	.५०
६ मरुद्देवताका मंत्रसंग्रह (अर्थ तथा स्पष्टीकरणके साथ)	५)	.७१

ऋग्वेदका सुबोध भाष्य

(अर्थात् ऋग्वेदमें आये हुए ऋषियोंके दर्शन।)

१ से १८ ऋषियोंका दर्शन (एक जिल्दमें)			१६)	२)
(पृथक् पृथक् ऋषिदर्शन)				
१ मधुच्छन्दा	ऋषिका	दर्शन	१)	.२५
२ मेधातिथि	,,	,,	२)	.२५
३ शुनःशेप	,,	,,	१)	.२५
४ हिरण्यस्तूप	,,	,,	१)	.२५
५ काण्व	,,	,,	२)	.२५
६ सव्य	,,	,,	१)	.२५
७ नोधा	,,	,,	१)	.२५
८ पराशर	,,	,,	१)	.२५
९ गोतम	,,	,,	२)	.३७
१० कुत्स	,,	,,	२)	.३७
११ त्रित	,,	,,	१.५०	.३१
१२ संवनन	,,	,,	.५०	.१२
१३ हिरण्यगर्भ	,,	,,	.५०	.१९
१४ नारायण	,,	,,	१)	.२५
१५ बृहस्पति	,,	,,	१)	.२५
१६ वागाम्भृणी	,,	,,	१)	.२५
१७ विश्वकर्मा	,,	,,	१)	.२५
१८ सप्त ऋषि	,,	,,	.५०	.१२
१९ वसिष्ठ	,,	,,	७)	१)
२० भरद्वाज	,,	,,	७)	१.५०

मन्त्री— 'स्वाध्याय मण्डल, पोस्ट— 'स्वाध्याय मण्डल (पारडी)' [जि. सूरत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वैदिकधर्म

मननशीलोंको बढानेवाला प्रभु

१ २र ३ १ २ ३ २ ३ १ २र
त्वꣳहि शश्वतीनामिन्द्र धर्ता पुरामसि ।
३ २उ ३ १ २ ३ १ २र ३ २
हन्ता दस्योर्मनोर्वृधः पतिर्दिवः ॥ ३ ॥ १२४९ ॥

(सामवेद उ. ९।५।९)

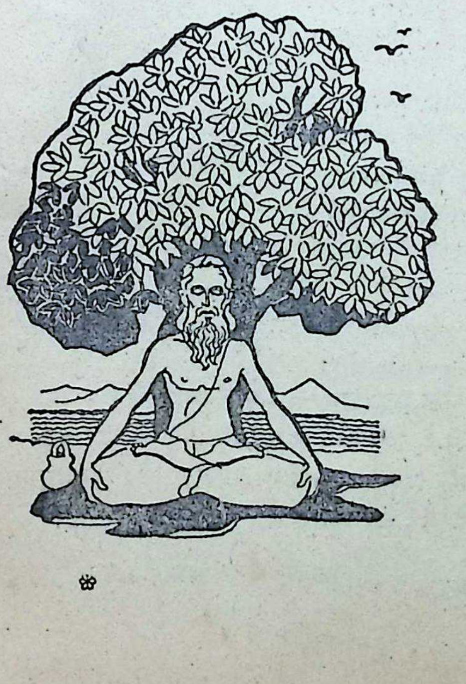

हे इन्द्र ! (त्वं हि) तू निश्चयसे (शश्वतीनां पुरां धर्ता) शत्रुकी शाश्वत नगरियोंका भेदन करनेवाला (असि) है, तथा (दस्योः हन्ता) शत्रुका नाश करनेवाला, (मनोः वृद्धः) मनन करनेवाले मानवोंका संवर्धन करनेवाला और (दिवः पति) द्युलोकका शासन करनेवाला है ।

शत्रुकी मजबूत नगरियोंको तोडकर, शत्रुका पराभव करनेवाला, दुष्टोंका नाश करनेवाला, जो मननशील सुविचारी भक्त हैं उनका संवर्धन करनेवाला और द्युलोकका सच्चा स्वामी, विश्वका एकमात्र शासन करनेवाला प्रभु है, उसकी भक्ति मानवोंको करनी चाहिये । क्षत्रियोंको ये संरक्षण करनेवाले शुभ गुण अपने अन्दर धारण करने चाहिये और शत्रुओंको दूर करना चाहिये ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

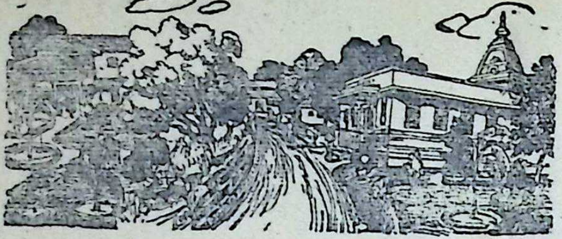

स्वाध्याय मंडल वृत्त

१ गायत्री परिवार— इस मासमें गायत्री परिवारका गायत्री मंत्रजप ऐसा हुआ है—

	जप संख्या
श्री. बाळकृष्णरावजी कुलकर्णी म्हसवेकर, म्हसवें	२६०००
,, द. गो. पलुसकर; नापा	२४४००
,, एम्. एल्. कान्तराव, चिपुरुपल्ली.	५६१६०
,, श्री. दा. सातवळेकर, पारडी	६०००
कुल	१,१२,५६०
पूर्व प्रकाशित	१,००,७९,१८७
कुल जपसंख्या	१,०१,९१,७४७

२ ग्रंथ प्रकाशन सहायता— इस मासमें ग्रंथ प्रकाशन सहायता यह प्राप्त हुई है

श्री. लाधुराम शर्मा, चन्द्रनगर	१००
,, डॉ. भगतराम गुप्ता, लुधियाना	१००
,, सखाराम हरि उपाध्याय, चिलिमोरा	२१

आशीर्वाद टीकीट

,, सत्यनारायणराव,	नागरकर्णूल	२
,, अध्यापक वर्गम्	,,	२
,, अवसू बुला पाटील, एरंडोल		१
,, आचार्य, शेठ रा. डो. संस्कृत वेदपाठशाला, घांघळी		१
,, बुचिलिङ्गम्	नागरकर्णूल	१
,, परशुराम रेड्डि	,,	१
,, पूर्ण चन्द्रराव	,,	१
,, रामकृष्ण शर्मा	,,	१
,, के. कृष्णारेड्डि	,,	१
,, सज्जीवराव	,,	१
,, सर्वेश्वर	,,	१
,, सूर्यनारायण	,,	१
,, महम्मद इसहाख	,,	१
,, मृत्युञ्जय शर्मा	,,	१
,, महम्मद हुस्सेन	,,	१
,, पी. कृपानन्द	,,	१
,, एम्. पी. ज्ञानशिरोमणि	,,	१
,, महम्मद ओमर शरीफ	,,	१
,, सय्यद निसार अली	,,	१
,, खाजी महम्मद नसीरुद्दीन	,,	१
,, आर. शंकर	,,	१
,, जी. चन्द्रमौळि	,,	१
,, सत्यनारायण स्वामी	,,	१
,, डी. चन्द्रमौळि	,,	१
,, डी. वेंकट रेड्डि	,,	१
,, काशी भास्कर मूर्ती, जडचर्ला		१
,, काशी भास्कर शर्मा	,,	१
,, गूडा पट्टाभिराम शर्मा, मिडजिल		१
,, प्रतापरेड्डि	नागरकर्णूल	१
,, आर. वेणुगोपाल रेड्डी	,,	१
,, एम्. वेंकट नृसिंह	,,	१
,, वी वेंकट रेड्डी	,,	१
,, ए. सुन्दराचार्य	,,	१
,, के. गिरिजाशंकर	,,	१
,, डी. एच. एम्. एस. शर्मा	,,	१
,, डी. चेन्नकृष्ण	,,	१
,, के. वी. सुब्बाराव	,,	१
,, एस. वेणु गोपालराव	,,	१
,, सी. मुरलीधरराव	,,	१
,, वी. वंकटराम रेड्डी	,,	१
	कुल रु.	२६३
	पूर्व प्रकाशित रु.	१,१८,००४·८८
	कुल जमा रु.	१,१८,२६७·८८

३ ग्रंथ प्रकाशन— 'ब्रह्मविद्या' हिंदीमें प्रथम भाग छप रही है गुजरातीमें मेधाजनन और संगठन यह चौथा भाग छप रहा है। मराठीमें आरोग्य और दीर्घायुष्य वह तीसरा भाग छप रहा है।

मन्त्री— स्वाध्याय मण्डल, पारडी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रार्थना और ध्यान

श्री माताजी

*

११ जुलाई १९१४

सत्ताके सभी स्तरोंमें, कर्मकी सभी धाराओंमें, सभी वस्तुओंमें, सभी लोकोंमें, हम तेरा साक्षात्कार प्राप्त कर सकते तथा तेरे साथ युक्त हो सकते हैं, क्योंकि तू सर्वत्र और सर्वदा उपस्थित है। जिसने अपनी सत्ताकी किसी एक क्रियामें अथवा किसी एक विश्व-व्यापी जगत्में तेरा साक्षात्कार प्राप्त किया है वह कहता है। 'मैंने उसे पा लिया है,' और फिर अन्य किसी चीजकी खोज नहीं करता, वह समझता है कि वह मानवीय संभावनाओंके शिखर पर पहुंच गया है। कैसी भूल है यह, हमें तो सभी स्तरों पर, सभी धाराओंमें, सभी वस्तुओंमें और सभी लोकोंमें, प्रत्येक उपकरणके अंदर तेरा आविष्कार करना होगा और तेरे साथ युक्त होना होगा और यदि हम किसी एक उपकरणको चाहे वह जितना भी तुच्छ क्यों न हो, एक किनारे छोड दें तो तेरे साथ हमारा मिलन पूर्ण नहीं हो सकता, सिद्धि संपादित नहीं हो सकती।

और यही कारण है कि तुझे पा लेना अनंत सोपानके अंदर महज पहली सीढी है....... ।

हे प्यारे भगवन्! हे चरम रूपान्तर साधक! समस्त अवहेलना, समस्त आलस्यपूर्ण अकर्मण्यताका अवसान कर दे, हमारी सभी शक्तियोंको एक साथ एकत्र कर एक पोटलीमें बांध दे, उन्हें एक अदम्य, अबाध संकल्प शक्तिमें परिणत कर दे।

हे प्रकाश! प्रेम, अनिर्वचनीय शक्ति सभी अणु-परमाणु तुझे पुकार रहे हैं जिससे कि तू उनमें प्रवेश करे और उन्हें रूपान्तरित कर दे....... ।

सबको मिलनका सुख प्रदान कर।

\+ \+

६ अगस्त १९१४

तब भला ये दोष, त्रुटियां और ये अपूर्णताएं क्या हैं, जो आत्मदानमें बाधा डालती हैं, उसे पर्याप्त रूपमें पूर्ण नहीं बनने देतीं जिससे कि तू उसका स्वागत करे, जिससे कि वह बलिदान तुझे ग्रहण करनेके योग्य प्रतीत हो...अभी भी इस आधारके अंदर सब प्रकारकी सीमाएं मौजूद हैं, क्या तू उन्हें भंग नहीं कर डालेगा?

हे नाथ! हम जानते हैं कि पृथ्वीके लिये यह बडा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निकट काल है; जो लोग उसके निकट तेरे माध्यम बन सकें, संघर्षके भीतरसे एक महत्तर सामञ्जस्यको बाहर प्रकट कर सकें तथा धुंधली कुरूपताके अंदरसे एक दिव्य-तर सौंदर्यको उत्पन्न कर सकें उन्हें ऐसा करनेके लिये तैयार हो जाना चाहिये। हे प्रभु! हे शाश्वत अधीश्वर! हम तुझसे अनुनय करते हैं, हमारे प्रयासोंका प्रत्युत्तर दे, उन्हें ज्योति से भर दे, हमें पथ दिखा, हमें आंतरिक बाधाओंको भंग करने, समस्त विघ्नोंको पार करने की शक्ति प्रदान कर।

हे मेरे मधुमय ईश्वर! मैं तेरे चरणों पर साष्टांग लोट रही हूं और मेरी सारी सत्ता तुझे पुकार रही है और तीव्र भावसे अनुनय विनय कर रही है: मेरी व्यक्तिगत असमर्थताले मुझे मुक्त कर!

\+ \+

२१ मार्च १९१४

हे प्रभु! प्रेमके दिव्य स्वामी! उनकी चेतना और उनके हृदयको आलोकित कर। उन्होंने तेरी ओर प्रवृत्त होनेका प्रयत्न किया था, किन्तु उनके अज्ञानके कारण किसी प्रकार उनकी प्रार्थनाएं शायद तेरी ओर नहीं उठ सकीं और उनके झूठे विचारोंने उनकी अभीप्साका मार्ग बन्द कर दिया। फिर भी अपनी करुणाके कारण तू समस्त सद्भावनाको उचित विकास प्रदान करता है और इसके लिये कि तेरी दिव्य ज्योति बुद्धियोंको आलोकित कर दे तथा तेरा उच्च प्रेम उनके हृदयोंमें पैठ कर उन्हें उस उच्च और पवित्र दयालुतासे भर दे जो तेरे विधानकी एक श्रेष्ठतम अभिव्यक्ति है केवल सद्हृदयताका एक आलोकित क्षण भी काफी है। प्रदान कर कि जिन क्षणोंमें तेरे सच्चे संपर्कमें आकर तेरी इच्छाके अनुसार मैंने उनके लिये जो चाहा था उसे वे तब ग्रहण कर सकें जब वे बाह्य आवश्यकताओंको भूलनेका प्रयत्न करते हुए अपने उच्चतम विचार, अपनी श्रेष्ठतम भावनाकी ओर मुडें।

ऐसी कृपा कर कि तेरी उत्कृष्ट उपस्थिति की परम शांति उनके अंदर जागृत हो जाय।

\+ \+

१७ नवम्बर १९१४

ओह, कितना अधिक धैर्य तुझमें होगा हे महामहिम माता! जब जब तू भूलोंको सुधारनेके लिये, अपनी ज्ञान संबंधी भ्रांतिके द्वारा पथभ्रष्ट व्यक्तिकी अनिश्चित अग्रगतिको और भी तेज बनानेके लिये, सुनिश्चित पथ दिखाने तथा उस पर उसे बिना ठोकर खाए चलनेकी शक्ति देनेके लिये अभिव्यक्त होती है तब-तब सर्वदा ही, वह एक छिद्रान्वेषी और अदूरदर्शी परामर्शदात्री समझ कर तुझे दूर ढकेल देता है। सिद्धान्तका जहां तक प्रश्न है, वह एक अस्पष्ट और असंलग्न प्रेमके साथ तुझे प्यार करना चाहता तो है, परन्तु उसका घमंडी मन तुझ पर निर्भर करना अस्वीकार कर देता है और तेरे पथ प्रदर्शनमें आगे बढनेके बदले अकेले भटकना ही अधिक पसंद करता है।

और तू, हमेशा हंसती हुई अपनी अथक करुणा वश, उसके उत्तरमें कहती है; 'यह जो बुद्धि वृत्ति है, जो मनुष्यको दाम्भिक बनाती और मूल-भ्रान्तिमें ले जाती है, वह यदि एक बार शुद्ध और प्रकाशपूर्ण हो जाय तो वह उसे बहुत दूर, विश्व प्रकृतिसे भी बहुत ऊपर उठा ले जा सकती है, समस्त अभिव्यक्तिके परे जो हम सबके परम प्रभु हैं उनके साथ प्रत्यक्ष और सचेतन संयोग स्थापित करा सकती है। यह विभक्त करनेवाली बुद्धि, जो उसे मुझसे अलग हटा देती है, उसे ऐसी योग्यता भी प्रदान करती है कि वह शीघ्रताके साथ शिखरके बाद शिखर पार करता हुआ ऊपर उठ जाता है, उस विश्वका समस्त भार उसकी अग्रगतिको रोकने या अटकानेमें असमर्थ होता है जो इतना विशाल और इतना जटिल होता है कि वह उतनी तेजीसे आरोहण नहीं कर सकता।'

हे भगवती माता! सर्वदा ही तेरा वचन आश्वासन और आशीर्वाद प्रदान करता है, शान्ति और प्रकाश देता है, और तेरा उदार हाथ उस पर्देकी एक तहको खोल देता है जो अनन्त ज्ञानको ढक रखता है।

कितनी शान्त, महान् और शुद्ध है तेरे पूर्ण ध्यानकी दीप्ति!

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तेरह वर्षकी बालिका

लेखक

डा. श्रीनिवास ऐयंगर

☆

श्री माताजी

'ऊपरसे देखनेमें मेरा जीवन अत्यन्त साधारण और यथा संभव सामान्य है, और भीतर यह क्या है?' (प्रार्थना और ध्यान)

'इस सत्ताका समूचा पार्थिव जीवन, आरम्भसे लेकर वर्तमान क्षण तक, इसे एक झूठा सपना मालूम होता है।' (प्रार्थना और ध्यान)

'मैं इस जगत्में एक सच्चे शून्यके समान हूं।' (प्रार्थना और ध्यान)

लगभग चालीस वर्ष पहले लिखे हुए श्री माताजीके ये शब्द अर्थ पूर्ण हैं। साधारण और सामान्य? एक झूठा सपना? एक सच्चा शून्य? बाह्य रूप और सद्वस्तु भला अन्ध मनुष्यजाति किस तरह एकको दूसरेसे पृथक् जान सकती है। माताजीका जीवन बाहरसे देखनेमें 'साधारण और सामान्य' प्रतीत हुआ होगा। पर भीतरकी लौ, दहकते हुए अग्निकुंड, फैलनेवाले ज्योति-कवच, इन सबकी प्रचंडताका कौन अनुमान लगा सकता था अथवा इनकी यज्ञीय आरोहण धाराको लक्ष्य कर सकता था?

आजकी श्री मां एक दिन बालिका थीं— वह फ्रांसके एक महाजन (Banker) की पुत्री थीं— और यथा समय वह युवती हुई, सनातन नारीत्वकी शक्तियों और सुषमाओंकी अधिकारिणी बनीं। बालिका, युवती कितने निरर्थक हैं ये शब्द—

Thou, whose exterior semblance doth believe.
Thy soul's immensity,
Thou best Philosopher, who yet doth keep.
Thy heritage, thou Eye among the blind.
That, deaf and silent, read'st the eternal deep,
Haunted forever by the eternal mind,-
Mighty Prophet ! Seer Blest ! +

अर्थात् तू, जिसका बाह्य रूप आत्माकी विशालताको छिपाये रखता है, सर्वश्रेष्ठ दार्शनिक है और फिर भी अपनी परम्पराको निभाता है, तू अन्धोंके बीच वह नेत्र ज्योति

+ वर्ड्स्वर्थ (Wordsworth)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है जो अन्यत्र कान न दे, निश्चल नीरव रहकर सनातन सागरके संकेतोंको पढती है। शाश्वत ज्ञान द्वारा निरन्तर आक्रान्त तू शक्तिशाली देवदूत है। वर प्राप्त क्रान्तदर्शी है।

बालक कृष्णने, अत्यंत बाल सुलभ ढंगसे, अपने मुंहमें कुछ मिट्टी डाल ली, और जब यशोदाने उनसे मुंह खोलनेको कहा तब यशोदाने देखा— आश्चर्योंका आश्चर्य ! संपूर्ण विश्व-ब्रह्माण्ड, पृथ्वी, आकाश, तारे, नक्षत्र, ग्रह, सूर्य और चन्द्रमा तथा असंख्य जीवित प्राणी, सब उस 'गैर-जिम्मेदार' नन्हें बच्चेके नन्हेंसे मुंहके अन्दर ! तब बच्चेकी बहु-व्यापकता सच्ची है, यद्यपि हम उसे सीमित करने, आच्छन्न करने और घटाकर यथासंभव छोटे-से-छोटा बना देनेकी यथेष्ट चेष्टा करते हैं।

जब माताजी तेरह वर्षकी बालिका थीं तब वह एक विचित्र रूपान्तरकारी अनुभवमेंसे गुजरीं, नित्य एक प्रकारका चमत्कार अनुभूत हुआ और वह लगातार प्रायः एक वर्ष-तक चलता रहा।

'... प्रत्येक रात ज्योंहि मैं बिछौनेपर लेटती, मुझे ऐसा मालूम होता कि मैं अपने शरीरसे बाहर निकल आयी हूं और सीधे ऊपरकी ओर, अपने मकानके ऊपर, फिर शहरके ऊपर, बहुत ऊँचाईपर उठ गयी हूं। फिर मैं देखती हूं कि मैंने एक चमचमाता सुनहला चोगा पहन रखा है जो मुझसे बडा है, और जैसे जैसे मैं ऊपर उठती वैसे वैसे वह चोगा भी बढता जाता, मेरे चारों ओर गोलाकार फैलता जाता, मानों शहरके ऊपर एक विशाल छतका रूप ले लेता। फिर मैं देखती कि सभी ओरसे मनुष्य, स्त्रियां, बच्चे, बूढे, बीमार, दुःखी बाहर आते हैं, वे चारों ओर फैले हुए चोगेके नीचे एकत्र होते और सहायताके लिये विनती करते, अपनी विपत्तियों, अपने दुःख-कष्टों, अपनी पीडाओंकी कहानी सुनाते। उत्तरमें वह नमनीय और सजीव चोगा प्रत्येक व्यक्तिकी ओर अलग अलग फैल जाता, और ज्योंहि वे उसे छूते त्योंहि वह आश्वस्त या नीरोग हो जाते और शरीरसे बाहर निकलनेके समयसे अधिक प्रसन्न और सबल बनकर अपने शरीरमें वापस चले जाते। कोई दूसरी चीज इससे अधिक सुन्दर मुझे प्रतीत नहीं होती थी, कोई दूसरी चीज मुझे इससे अधिक सुख नहीं देती थी, और दिनके मेरे सभी कार्य रातके इस कार्यके मुकाबले, जो कि मेरे लिये सच्चा जीवन था, बडे नीरस और भद्दे, सच्चे जीवनसे खाली प्रतीत होते थे। प्रायः ही जब मैं इस तरह ऊपर उठ जाती तब मैं अपनी बायीं ओर एक वृद्ध पुरुषको देखती जो नीरव और निश्चल दिखायी देते और जो मेरी ओर हिताकांक्षी स्नेहकी दृष्टिसे ताका करते तथा अपनी उपस्थितिसे मुझे उत्साहित करते। ये वृद्ध व्यक्ति, जो गहरे बैंगनी रंगका एक लंबा चोगा पहने होते मुझे पीछे मालूम हुआ- उसकी साकार मूर्ति थे जिसे 'दुःख-पुरुष' (Man of Sorrows) कहते हैं।'
(प्रार्थना और ध्यान)

यह एक अद्भुत जागरण है। बालिका सचमुचमें वर प्राप्त क्रांतदर्शी है, महान् आरोग्य दात्री है। दुःखोंका हिमालय भी उसे एकदम कुचल नहीं सकता; उसके फैलने वाले निर्मल चोगेकी एक ही अन्तर्मुखी क्रिया होती है और तुरत रोग निवारणका कार्य आरंभ हो जाता है तथा दुःख दर्द काफूर हो जाता है। ×

× देखिये ऋषभ चन्दजी क्या कहते हैं— 'सुनहले चोगेका फैलना उस भागवत कृपा-शक्तिकी अर्थपूर्ण क्रिया है जो दुःखी मानव जातिकी सहायता करने लिये नीचेकी ओर झुकती है।'
(In the Mother's Light, Part I, P. 6.)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

योगाश्रमकी श्री माताजी

(लेखक— डा. श्रीनिवास ऐयंगर)

*

श्री माताजीके पांडिचेरीके योगाश्रममें आकर लगभग ३२ वर्ष बीत चुके हैं। परन्तु उनका श्रद्धा-विश्वास हिला नहीं है, एक क्षणके लिये भी डिगा नहीं है। अन्धकारके काल आये हैं, पीछे हट गये हैं तथा विलीन हो गये हैं, सन्देहोंने आकर रास्ता काटा है और फिर वे अदृश्य हो गये हैं, और एक नयी पृथ्वी और एक नए स्वर्गका निर्माण करनेका कार्य बिना किसी रुकावटके तथा बिना किसी हो हल्लाके चलता रहा है। समय-समयपर, साधारणतया नये वर्षके अवसरोंपर, श्री माताजी 'प्रार्थनाएं' लिखती रही हैं जिनमें विशेष प्रकारके विकट क्षणोंमें होनेवाली मनुष्य जातिकी समष्टिगत अभीप्साएं मूर्तिमान हुई हैं— और इन प्रार्थनाओंने, विशेषकर नये वर्षकी प्रार्थनाओंने दुःखी मानव जातिकी आशाओं और आकांक्षाओंको आकार और शक्ति, समुचित दिशा और गति प्रदान की है। युद्ध कालीन तथा उसके बादकी कुछ प्रार्थनाओंमें बडा गहरा अर्थ तथा प्रचुर सृजनात्मिका शक्ति निहित है—

"१९४०

"नीरव और अंतर्मुखी होनेका वर्ष ... ।"

'हे भगवान्! हम एकमात्र तेरी कृपा पर ही संपूर्ण रूपसे निर्भर करें।'

"१९४४"

हे प्रभु! समस्त मनुष्य जाति तुझसे प्रार्थना करती है कि तू इसे बार बार उन्हीं मूर्खताओंमें जा पडनेसे बचा।

'ऐसी कृपा कर कि जो भूलें पहचानी जा चुकी हैं, वे फिर नये सिरेसे दुहरायी न जायं।

'अंतमें यह प्रदान कर कि मनुष्य जाति अपने घोषित आदर्शोंको ठीक ठीक और सचे तौर पर कर्ममें प्रकट करे।'

'१६ अगस्त १९४५'

'विजय प्राप्त हो गयी, तेरी विजय, हे प्रभु, जिसके लिये हम तुझे अपनी हार्दिक कृतज्ञता निवेदित करते हैं।'

'परन्तु अब हमारी तीव्र प्रार्थना तेरी ओर उठ रही है। वास्तवमें तेरी ही शक्तिसे, तेरी ही शक्तिके द्वारा विजेताओंने विजय पायी है। ऐसी कृपा कर कि वे अपनी सफलताकी अवस्थामें इस बातको भूल न जायं और उन्होंने दुःख-कष्ट और संकटके समय तेरे सामने जो प्रतिज्ञाएं की हैं उनका वे पालन करें। उन्होंने युद्ध करनेके लिये तेरे नामकी दुहाई दी थी, अब वे शान्ति स्थापित करते समय तेरी कृपाको भूल न जायं।'

फिर १५ अगस्त १९४७ को लिखा हुआ 'भारत माताका आवाहन' भी विशेष महत्त्वकी चीज है—

'हे हमारी मां! हे भारतकी आत्मशक्ति! हे जननी! तूने कभी, अत्यन्त अंधकार पूर्ण अवसादके दिनोंमें भी, यहां तक कि जब तेरे बच्चोंने तेरी वाणी अनसुनी कर दी, अन्य प्रभुओंकी सेवा की तथा तुझे अस्वीकार कर दिया, तब भी उनका साथ नहीं छोडा। हे मां! आज, इस महान् घडीमें, जब कि वे जग पडे हैं और तेरी स्वतंत्रताके इस उषःकालमें तेरे मुखमण्डल पर ज्योति पड रही है, हम तुझे नमस्कार कर रहे हैं। हमें पथ दिखा जिससे स्वतंत्रताका जो विशाल क्षितिज हमारे सामने उन्मुक्त हुआ है वह तेरी सच्ची महानताका तथा विश्वके राष्ट्र समाजके अन्दर तेरे सच्चे जीवनका भी क्षितिज बने। हमें पथ दिखा जिसमें हम सर्वदा महान् आदर्शोंके पक्षमें ही खडे हों और अध्यात्ममार्गके नेताके रूपमें तथा सभी जातियोंके मित्र और सहायकके रूपमें तेरा सच्चा स्वरूप मनुष्य जातिको दिखा सकें।'

श्री अरविंदाश्रम आज एक छोटासा संसार ही है। साधकोंकी संख्या लगभग बारह सौसे ऊपर पहुंच गयी है और वे पचासों मकानोंमें निवास करते हैं जो शहरमें प्रायः दूर दूर तक फैले हैं। आश्रमकी अतिथि शाला, 'गोलकुंड' बडा शानदार और आकर्षक मकान है। छापखाना और दफ्तरी विभाग, गोशाला, बेकरी, दवाखाना, पुस्तकालय, पाठशाला आदि बहुतेरे ऐसे सजीव अंग हैं जो आश्रमके सौंदर्य और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शक्तिकी वृद्धिमें सहायक होते हैं। मैसूर विश्वविद्यालयके प्रो.- चांसलर डा. सी. आर. रेड्डी कहते हैं—

'... इस विलक्षण आश्रममें, जीवन और जीवनका आनन्द दोनों ही आध्यात्मिकता उन्नतिके साथ प्रसन्नतापूर्वक घुलमिल कर एक हो गये हैं। यह मानों वेदोंमेंसे उखाड कर पांडिचेरीमें रोप दिया गया है।

'और अद्भुत माताजी, जो अधिष्ठात्री देवी हैं, और महान् गुरुवर जो प्रेरणाप्रद आत्मा हैं- उनमें हम पाते हैं प्रकृति और पुरुषका प्रत्यक्ष रूपक जो चारों ओर जीवन, ज्योति और आनन्द विकीर्ण कर रहा है ...। यदि कोई यह समझे कि पूज्या श्री माताजी वैराग्यजन्य कठोरता और चिर-उदासीनताका अभ्यास करती होंगी तो वह भूल करेगा। वह वैरागिनी नहीं हैं। वह टेनिस खेलती हैं। देवता बराबर ही प्रकाशयुक्त होते हैं। और इस समाजमें ऐसे मनुष्यों, स्त्रियों और बच्चोंका एक विशाल दल है जिनके हृदयोंमें भक्ति है और जिनकी दृष्टि और वार्त्तालाप और व्यवहारमें प्रेम, ज्योति और आनन्द है ...।' +

आश्रममें सन्यास धर्मके लिये तनिक भी स्थान नहीं है। सिद्धार्थने राजगृहके 'शांत कुंजों' में रहनेवाले विषादग्रस्त योगियों, भिक्षुओं और सन्यासियोंके जीवनको प्रसन्नतासे रहित और अदिव्य पाया था। ऐसे स्वनिर्मित दुःखागारोंके मुकाबले दांते (Dante) का रौरव नरक भी एक स्वास्थ्य-कर स्थान समझा जा सकता है। एक बार किसीने प्रश्न किया, 'माताजी भला इतने मूल्यवान् और सुन्दर कपडे क्यों पहनती हैं ?' तो इसके उत्तरमें श्री अरविंदने उलटा प्रश्न करते हुए लिखा, 'क्या तुम्हारी धारणा यह है कि पृथ्वीपर दरिद्रता और कुरूपताके द्वारा ही भगवान्‌का प्रतिनिधित्व होना चाहिये ?' ● यदि भगवान् 'सत्य' हैं, तो फिर साथ ही वह शक्ति हैं, आनन्द, ज्ञान हैं, सौंदर्य हैं, और यदि दृढतापूर्वक सौंदर्य और आनन्दको कुचल दिया जाय तो सत्यके समुज्ज्वल निर्मलताका महत्त्व और प्रकाश ही जाता रहेगा। 'सीनिक' (ऐश्वर्य-विमुख) लोगोंका हौज और भोगवादीका आनन्द-कुंज दोनों ही एक समान पथभ्रष्ट करते हैं; निराहार रहना महज आत्म हत्याकी ही ओर ले जाता है तथा पेटूपन भी हमें उससे और भी अधिक तेजीसे उसी लक्ष्यतक पहुंचाता है। केवल मध्य मार्ग ही, जो उद्देश्यपूर्ण, तीक्ष्ण धारवाला मार्ग भी होता है, हमें 'निभृत हृदय केन्द्र' तक ले जा सकता है। सच्चे साधकके सभी विचार, सभी प्रयास, सभी सुख यज्ञके रूपमें निवेदित होते हैं और सभी रूपान्तरित होकर अभीप्सा की एक लौ बन जाते हैं जो सूर्यालोकित स्वर्गोंतक ऊपर चली जाती है। परमानन्दका द्वार खोलनेवाली चीज तो है जीवन्मुक्तकी शान्त विशालता, ज्योतिपूर्ण क्षमता और प्रचुर आत्मप्रसाद। अपने अनेक पत्रोंमें श्री अरविंदने आश्रम-जीवनमें तथा विकसनशील पार्थिव चेतनाके विशालतर नाटकमें दिव्य-मानव श्री मांकी भूमिकाका विशेष रूपसे वर्णन किया है—

'भगवान्‌को मानवधर्म ग्रहण करना पडता है जिसमें कि मनुष्य भी भगवान् तक ऊपर उठ सकें। यह एक सीधा सा सत्य है...... कि भगवान् ऐसा कर सकते हैं और... फिर भी वह भगवान् बने रह सकते हैं।' 卐

'केवल एक ही दिव्य शक्ति है जो विश्वमें भी कार्य करती है और व्यक्तिमें भी और फिर जो व्यक्ति और विश्वके परे भी है। श्रीमां इन सबकी प्रतिनिधि हैं, पर वह यहां शरीरमें रह कर कुछ ऐसी चीज उतार ले आनेके लिये कार्य कर रही हैं जो अभी तक स्थूल जगत्‌में इस तरह अभिव्यक्त नहीं हुई है कि यहांके जीवनको रूपान्तरित कर सके।' ×

आश्रम द्वारा परिचालित शिक्षण संस्थाओंका जहां तक प्रश्न है, उनका निरीक्षण करनेवाले अन्य सभी लोगोंकी तरह डा. रेड्डी पर भी 'उनके अंदर व्याप्त शक्ति और आनन्दकी प्राचीन भावना' का बडा गहरा प्रभाव पडा।

+ Mother India (Fortnightly) 3 Sept 1949

● श्री मां (श्री अरविंदके पत्र, पृष्ठ ११८.

卐 श्रीमां (श्री अरविंदके पत्र) पृ. ११०

× श्रीमां (श्री अरविंदके पत्र) पृ. १२

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

माताजीके प्रेरणाप्रद पथप्रदर्शनके अधीन आश्रमके बालकों और बालिकाओंको एक क्रमबद्ध शारीरिक शिक्षा दी जा रही है और आश्रम जीवनके इस अनोखे अंगका विवरण तथा उससे संबंधित चित्र त्रैमासिक पत्र ' शारिरिक–शिक्षण पत्रिका (' Bulletin of physical Education)* में प्रकाशित होते रहते हैं।

डा. रेड्डीने श्री गुरुदेव और श्री माताजीकी चर्चा पुरुष और प्रकृतिके प्रत्यक्ष प्रतीकके रूपमें की है, और सचमुच देखा जाय तो श्री माताजीका जो स्थान आश्रममें है वह विश्वमें शक्तिके स्थानसे मिलता–जुलता है। पर जो हो, साधकोंके लिये श्री माताजी परम पूज्या जननी हैं, भगवती माता हैं; वह श्री माताजी ही, योगाश्रम हैं; परन्तु श्री अरविंद भी आश्रम हैं; और आश्रमकी सभी चीजें माताजी हैं, और फिर उसी तरह आश्रमकी सभी चीजें श्री अरविंद हैं।

परन्तु श्री गुरुदेव चूंकि स्वयं बहुत पीछेकी ओर हैं, इसलिये श्री माताजी ही प्रकट रूपमें साधकोंके भीतरी और बाहरी जीवनकी संचालिका हैं। उनके आध्यात्मिक मातृत्व के संबंधमें हमें आश्चर्य करनेकी कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि इस बातको श्री अरविंदने एक बार अपने एक पत्रमें समझाया था।

' श्री मां तथा जो लोग उन्हें स्वीकार करते हैं उनके बीच जो संबंध है वह है चैत्य और मातृत्वका संबंध। सांसारिक मां का उसके बच्चेके साथ जो संबंध होता है उससे बहुत अधिक महान् यह संबंध है मानव–मातृत्व जो कुछ दे सकता है वह सब कुछ यह संबंध देता है, परन्तु देता है बहुत ही ऊँचे तरीकेसे और इसके अंदर वह अनन्तगुणा अधिक मात्रामें होता है......। आध्यात्मिक मातृत्वकी भावना इस आश्रमका ही आविष्कार नहीं है, यह एक शाश्वत सत्य है जो प्राचीन कालसे यूरोप और एशिया दोनोंमें ही स्वीकृत होता आ रहा है। और सांसारिक सम्बन्ध और चैत्य तथा आध्यात्मिक सम्बन्धके बीच जो मैंने विभेद किया है वह भी कोई नया आविष्कार नहीं है; यह एक ऐसी भावना है जिसे लोग सर्वत्र जानते हैं और समझते हैं और सब लोग पूर्ण स्पष्ट और सरल अनुभव करते हैं।' +

पांडिचेरीके आश्रममें साधकोंके लिये ' श्री माताजी ' का क्या अर्थ है इसे मनुष्य यहांके वातावरणमें अनुभव तो कर सकता है पर बुद्धिकी भाषामें उसका वर्णन नहीं कर सकता। आश्रम देखनेके लिये आनेवाला कोई भी यात्री तुरत इस चीजको ताड सकता है बशर्ते कि उसकी आंखें और कान सक्रिय हों तथा उसकी अनुभव–शक्ति तीक्ष्ण और सजग हो। अगर कोई भी यात्री स्वयं श्री मांको न देख सके, या देख कर भी उनमें कोई विशेष बात न देख सके तो वह साधकोंको देख सकता है। माता जीके प्रति उनकी एकान्त भक्ति– उनमेंसे बहुतोंकी वह परमानन्दमय आत्मविस्मृति जिसे वे श्री माताजीके दर्शन करते समय या उन्हें प्रणाम करते समय अनुभव करते हैं– उनकी वह मौन प्रतीक्षा और मंत्रमुग्ध निश्चल नीरवता जिसमें वे संध्या समय उनकी उपस्थितिमें ध्यान करते हैं– इन चीजोंको देख कर हमारा यात्री थोडा विचार करनेके लिये बाध्य होगा; और फिर उसके विचार, जीवको भगवान् तक पहुंचानेवाले ' पवित्रात्मा ' (Holy Ghost) की तरह, उसे श्रद्धाके क्षेत्रोंमें दूर तक पहुंचा देंगे। चीनी विद्वान्, प्रोफेसर तान–यून–शान (Tanyunshan) ने अपनी अल्पकालीन आश्रम–यात्राके बाद अपने अनुभवोंका वर्णन इस प्रकार किया था––

' आश्रमकी माताजी कितनी मधुर स्वभाव वाली हैं। वह एक शक्ति सी हैं, जिसे मनुष्य बाध्य होकर अनुभव करता है। मुझे ऐसा लगा मानों मैं एक ऐसे व्यक्तिसे बातें कर रहा हूं जो मेरी आत्माके अत्यन्त निकट है। वह सच-मुचमें सबकी मां हैं, और आश्रमकी प्रत्येक चीज उनके पथप्रदर्शनके अधीन गठित हो रही है।'

दूसरे यात्री, अंग्रेजी साहित्यके एक प्रोफेसरने इन पंक्तियोंके लेखकसे कहा कि श्री माताजीको प्रणाम करनेके बाद मैंने अपनी अंतरात्मामें एक ऐसे असामान्य आवेग और

---

* इस पत्रिकाके दो संस्करण निकलते हैं– (१) अंग्रेजी–फ्रेंच और (२) अंग्रेजी–फ्रेंच–हिन्दीमें— (अनु०)।

+ श्री मां (श्री अरविंदके पत्र) पृ. ७२–७३

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आनन्दका अनुभव किया जिसने मुझे सारी रात जगाये रखा। पहले 'विश्व भारती' में रहनेवाले तथा अब आश्रमके एक सदस्य, श्री शिशिरकुमार मित्रने पहले पहले सन् १९३९ में श्री माताजीको देखा, और अभिभूत और मुग्ध होकर उन्होंने जोशीले शब्दोंमें लिखा--

'वह (माताजी) आयुसे परे हैं, और शाश्वत यौवनकी साक्षात् मूर्ति हैं। वह सचमुच ही भगवान् महेश्वरकी दिव्य शक्ति राजराजेश्वरी हैं, जो सदा ही अपने दुःखी बालकोंको अभय-दान देती हैं, तथा अपनी स्वर्गीय मुस्कानसे उन्हें अपने पास आने, उसे स्वीकार करने तथा अमर बननेके लिये पुकारती हैं।' ❀

श्री अरविंदकी तरह उन्होंने भी बहुतेरे साधकोंको शुद्धतम प्रशान्त ज्ञानालोकसे भरपूर भक्तिमय काव्य लिखनेकी प्रेरणा प्रदान की है; और यदि कोई पूंजालाल या निशिकांत, कोई नीरद या दिलीप, कोई आर्जव या अमल कविताके माध्यमके द्वारा अपने आपको अभिव्यक्त करनेकी चेष्टा करते हैं तो वह कविता माताजीको, और श्री अरविंदको भी निवेदित होती है। पूर्णयोगकी साधनाका मूल मंत्र है 'स्मरण करो और अर्पण करो।' इस तरह श्री माताजीके साथ एकत्व प्राप्त करना योगका आधार है, और सब कुछ उन्हींके निर्देश × के अनुसार किया जाता है और सब कुछ यज्ञ-रूपसे उन्हें ही अर्पित होता है।

❀ Sri Aurobindo- A Homage p. 21

× श्री अरविंदने अपने कुछ पत्रोंमें इस बातकी चर्चा की है कि आश्रममें माताजीका स्थान क्या है। एक पत्रमें वह घोषित करते हैं कि 'श्री मां की चेतना और मेरी चेतना एक ही हैं, एक ही भागवत चेतना दोनोंमें है, क्योंकि लीलाके लिये यह आवश्यक है,' और एक दूसरे पत्रमें वह कहते हैं कि मैंने यह व्यवस्था की है कि साधक श्री माताजीसे ज्योति और शक्ति प्राप्त करें, 'और सीधे मुझसे नहीं ... । मैंने किसी सामयिक उद्देश्यसे यह व्यवस्था नहीं की है, बल्कि इस कारण की है कि यही एकमात्र तरीका है ... जो सच्चा और फलोत्पादक है।' (श्री मां- श्री अरविंदके पत्र- पृष्ठ १४ और १६)।

वेदकी पुस्तकें

	मूल्य रु.		मूल्य रु.
ऋग्वेद संहिता	१०)	यजुर्वेद वा. सं. पादसूची	१॥)
यजुर्वेद (वाजसनेयि संहिता)	४)	ऋग्वेद मंत्रसूची	२)
सामवेद	३)	अग्नि देवता मन्त्र संग्रह	६)
अथर्ववेद	६)	इन्द्र देवता मन्त्र संग्रह	७)
(यजुर्वेद) काण्व संहिता	५)	सोम देवता मन्त्र संग्रह	३)
(यजुर्वेद) मैत्रायणी संहिता	१०)	मरुद्देवता मन्त्र संग्रह	२)
(यजुर्वेद) काठक संहिता	१०)	दैवत संहिता (तृतीय भाग)	६)
(यजुर्वेद) तैत्तिरीय संहिता, कृष्ण यजुर्वेद	१०)	सामवेद कौथुम शाखीयः ग्रामगेय	
यजुर्वेद-सर्वानुक्रम सूत्र	१॥)	(वेय प्रकृति) गानात्मकः	६)

मूल्य के साथ डा. व्य., रजिस्ट्रेशन एवं पेकींग खर्च संमिलित नहीं है।

मंत्री— स्वाध्यायमण्डल, पोस्ट- 'स्वाध्याय-मण्डल (पारडी)' पारडी [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री माताजीके प्रवचन

कुछ व्यक्तिगत प्रसंग

*

(१)

जब मैं मनुष्योंकी ओर ताकती हूं और जब मैं उनके साथ व्यवहार करती हूं तब मैं यह संकल्प बनाये रखती हूं– मैं यह नहीं कहती कि सर्वदा ऐसा करना संभव होता है– पर फिर भी किसी तरह मैं यह संकल्प बनाये रखती हूं कि मैं उनके अन्दर उनके अपने चैत्य पुरुषको, उनके आदर्शको और जो कुछ वे करना चाहते हैं उसको, जो कुछ वे होना चाहते हैं उसको देखूं, उसे पकडूं और उसे ऊपर सतह पर निकाल लाऊँ। बस यही होता है मेरा मुख्य काम। जो कुछ मैं देखती हूं मैं उसे सामने खींच लानेकी कोशिश करती हूं। जब मैं ऐसा करती हूं, तब कुछ ऐसे प्रसंगोंको छोडकर जब कि लोग सचेतन होते हैं, मुझे सर्वदा इस बातका पक्का निश्चय नहीं होता कि उनकी बाहरी चेतना किस प्रकारकी है और वह किस हदतक है। और जब मैं किसीसे प्रश्न पूछती हूं तब मैं यह जानना चाहती हूं कि जिस चीजके विषयमें वह सचेतन है और जिस चीजको मैं देखती हूं, उन दोनोंमें क्या अन्तर है। मैं निरन्तर यही कार्य किया करती हूं। और यही कारण है कि लोगोंको लगता है कि मैं कुछ भी नहीं जानती।

तुम जो कुछ अपने विषयमें जानते हो और मैं जो कुछ तुम्हारे विषयमें जानती हूं उन दोनोंमें बहुत बडा अंतर होता है। मैं जो कुछ तुम्हारे विषयमें जानती हूं वह स्पष्ट ही वह चीज होती है जो तुम्हें बनना चाहिये। तुम्हारी बाहरी सत्ताको कोई भी मनुष्य अच्छी तरह देख सकता है। परन्तु उसके और तुम्हारी जिस आंतर सत्ताको मैं देखती हूं उसके बीच प्राणमय और मनोमय लोक हैं जो मनुष्यकी दृष्टिसे अत्यंत महत्त्वपूर्ण वस्तुएं हैं; क्योंकि जो कुछ मनुष्यको बनना है उसे सबसे पहले वहीं आकार लेना होगा और उसके बाद ही वह चीज स्थूल रूप ग्रहण कर सकती है। परन्तु, जैसा कि मैं कह चुकी हूं, जो कुछ तुम अपने विषयमें जानते हो, जो कुछ तुम्हारे अंदर सक्रिय रूपसे सचेतन है तथा अपनी सत्ताके सत्य–स्वरूपमें जो कुछ तुम हो इन दोनोंके बीच एक चौडी खाई है।

इस मध्यवर्ती लोकसे परिचित होना अथवा इसे समझना मेरे लिये थोडा कठिन है; क्योंकि मेरे लिये वह लोक मेघाच्छन्न, मिथ्यात्वका एक जगत होता है। तुम्हें यहां असत्य और मिथ्यात्वके बीचके अन्तरको ध्यानमें रखना चाहिये। असत्य तो वह चीज है जो एकदम झूठी, वास्तविकतासे रहित होती है, जो कभी हुई ही नहीं, जो है ही नहीं। मिथ्यात्व वह चीज है जो सच्ची नहीं है, इस अर्थमें सच्ची नहीं है

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कि वह तुम्हारे सत्य-स्वरूपकी अभिव्यक्ति नहीं है- किसी अंशमें नहीं है, और फिर भी अधिकांशतः तुम बाह्य रूपमें उसीके विषयमें सचेतन होते हो। बहुत थोडेसे लोग ही ऐसे होते हैं जिन्हें यह आंतरिक बोध होता है कि वे क्या होना चाहते हैं, वे क्या करना चाहते हैं, उनकी सत्ताका सत्य क्या है? इस तरहके लोग बहुत अधिक नहीं पाये जाते। कुछ लोगोंके विषयमें ऐसा होता है कि यह चीज सामने आती है और फिर रुक जाती है- ठीक बिजलीकी एक चमक क्षणभरके लिये आती है और उसके बाद फिर पूरा अंधकार छा जाता है: मेरे लिये यह एक शाश्वत प्रश्न है कि मैं यह जानूं कि उस बाह्य चेतनाकी क्या अवस्था है जो मुझे इतनी अवास्तव, इतनी असत्य प्रतीत होती है।

तुम्हारी दैनिक कार्यावलीके जघन्य स्वरूप तथा तुममेंसे प्रत्येक व्यक्तिको जो बनना चाहिये उसकी जो प्रतिमूर्ति मैं अपने सामने बनाती हूं इन दोनोंके बीच कितना अधिक विरोध है। मैं अपनी चेतनाकी सारी शक्ति लगाकर उस प्रतिमूर्तिको ज्यों की त्यों बनाये रखती हूं जिसमें कि तुम उसे प्राप्त कर सको। वही तुम हो, वही तुम्हारा अपना स्वरूप है। जिस अज्ञ, मूढ, धूर्त और बेईमान सत्ताको तुम 'हम' कहते हो वह तुम्हारा सच्चा स्वरूप नहीं है।

९-६-१९५४

(२)

बहुत, बहुत दिन पहले, एक समय, जब मैं पेरिसमें रहती थी, मैं करीब करीब रोज ही श्रीमती डी. एनसे मिला करती थी। वह विचारोंसे भरी हुई थीं। उन्होंने एक दिन मुझसे कहा- 'आपको कर्मकी बात नहीं सोचनी चाहिये, उसका अर्थ है कर्ममें आसक्ति। जब आप कुछ करना चाहती हैं तब वह यह सूचित करता है कि आप अभी भी सांसारिक चीजोंसे बंधी हुई हैं।'

मैंने उन्हें उत्तर दिया 'नहीं, यह बडी सरल बात है। आपको बस यह कल्पना करनी चाहिये कि वह सब पहले ही हो चुका है, वह सब भविष्यमें किया जायेगा और वह सब ठीक इस समय किया जा रहा है और तब आप तुरत यह अनुभव करेंगी कि आपका कार्य शाश्वत कालके अंदर एक भाव, एक क्षणके सिवा और कुछ नहीं है और फिर कभी आप उससे आसक्त नहीं होंगी।' उस समय मुझे गीताका ठीक ठीक कथन नहीं मालूम था। मुझे यह बात उस समय नहीं मालूम थी जिसे मैं यहां अपने ढंगसे कह गयी हूं- 'और कर्मके फलसे अनासक्त होकर कर्म कर।' मैं उस समय गीताको नहीं जानती थी, पर जो कुछ मैंने कहा था वह वास्तवमें वही था जो कि गीताकी शिक्षा है। तुम्हें इसलिये कर्म नहीं करना चाहिये कि तुम्हें कर्म करना चाहिये। बस, यही मुख्य बात। अवश्य ही यह एक ऐसी स्थिति है जो कभी-कभी खतरनाक साबित हो सकती है। क्योंकि एक प्रबल संकल्पके साथ कर्म करनेकी इच्छा करनेके बदले तुम सहज देखते रहोगे और चीजोंको घटित होते रहने दोगे।

३०-११-१९५५

(३)

दो बातें हैं जिन्हें एक-दूसरीके साथ मिला-जुला नहीं देना चाहिये, एक तो यह है कि मनुष्य क्या है और दूसरी यह है कि वह क्या करता है अर्थात् मनुष्य मूलतः स्वयं क्या है तथा बाहरी जगत्में क्या करता है। ये दोनों चीजें एक-दूसरेसे बहुत भिन्न है। मैं जानती हूं कि मैं क्या हूं। और चाहे दूसरे लोग जो कुछ समझें या कहें अथवा संसारमें चाहे जो कुछ भी क्यों न घटित हो, वह सत्य ज्योंका त्यों, अक्षुण्ण, अपरिवर्तित, एक वास्तविक तथ्य बना रहता है। वह अपने आपमें सत्य होता है और संसारके स्वीकार करने या अस्वीकार करनेके कारण वह सद्वस्तु न तो बढती है और न घटती है।

परन्तु जो कुछ भी मैं क्यों न होऊँ, जो कुछ मैं करती हूं वह उससे एकदम भिन्न विषय होता है; वह निर्भर करता है उन अवस्थाओं और परिस्थितियों पर जिनमें वस्तुएं होती हैं तथा जिनके अंदर और जिनके द्वारा मुझे काम करना पडता है। जो सत्य मैं लाती हूं उसे मैं जानती हूं, पर उसका कितनासा अंश इस जगत्में अभिव्यक्त होता है यह स्वयं इस जगत् पर निर्भर करता है। जो कुछ मैं ले आती हूं, उसे स्वीकार करनेकी क्षमता और संकल्प जगत्में अवश्य होना चाहिये, अन्यथा, यदि मैं अपने साथ सर्वोच्च तथा अत्यन्त प्रभावशाली सत्य भी ले आऊँ तो वह मानों पूर्ण रूपसे उस चेतनाके लिये अस्तित्वहीन हो जायेगा जो उसे न तो पहचानती है और न ग्रहण करती

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है; यह चेतना रखनेवाला व्यक्ति उस सत्यसे रंचमात्र भी लाभ नहीं उठा सकेगा।

तुम कहोगे कि यदि आप ऐसा सत्य ले आवें जो सर्वोच्च और शक्तिमान् हो तो फिर वह अपने आपको स्वीकार करनेके लिये संसारको मजबूर क्यों नहीं कर सकता जिस शुभ वस्तुको मनुष्य अस्वीकार करता है वह उससे जबर्दस्ती अपनेको क्यों स्वीकार नहीं करा सकती ? पर यह वह तरीका नहीं है जिससे कि यह जगत् सृष्ट हुआ था और विकसित होता है। सृष्टिका मूल है स्वातन्त्र्य चेतनाकी स्वतंत्र चुनाव करनेकी एक वृत्ति है और उसी वृत्तिके वश, चेतनाने अपने आपको बाह्य जगत्के रूपमें प्रक्षिप्त किया है।

यह स्वतंत्रता ही उसकी मौलिक प्रवृत्तिका विशेषत्व है। अगर संसार अपने परम सत्यको, अपने उच्चतम श्रेयको अस्वीकार करता है, तो वह अपनी स्वतंत्र इच्छाके आनन्दके साथ ही ऐसा करता है, और यदि उसे उस सत्य और उस श्रेयकी ओर मुड़ना हो तथा उन्हें स्वीकार करना हो तो उसे उसी तरह अपनी स्वतंत्र इच्छाके आनन्दके साथ ही करना होगा। यदि विपथगामी संसारको ठीक पथपर लौट जानेकी आज्ञा दी जाये और वह तुरत वैसा कर दे, यदि सभी चीजें तुरत-फुरत, चमत्कारोंके द्वारा कर दी जायें तो फिर संसारकी सृष्टि करनेका कोई मतलब ही नहीं रह जायेगा। सृष्टिका अर्थ है विकासकी एक क्रिया, यह एक यात्रा है, क्रमागत सोपानों और स्तरोंसे गुजरनेवाली देशकालांतर्गत एक गति है। यह दूर, अपने मूलसे दूर जानेवाली एक गति है तथा अपने मूलकी ओर लौट आनेवाली गति है। यही वह सिद्धान्त और योजना है जिसपर यह खड़ी है। इस योजनामें संसारको गठित करनेवाले किसी तत्वपर अपनी स्वाभाविक गति त्याग देनेकी, बाहरसे आनेवाले किसी आदेशको माननेकी मजबूरी नहीं है; ऐसी मजबूरी सृष्टिके स्वर-तालको ही भंग कर देगी।

और फिर भी एक मजबूरी है। यह मनुष्यकी अपनी ही प्रकृतिका गुप्त दबाव है जो समस्त परिवर्तनोंके भीतरसे उसे अपने मूलस्रोतकी ओर फिरसे जानेके लिये बाध्य करता है। जब यह कहा जाता है कि भगवत्कृपा सब कुछ कर सकती है और उसे सब कुछ करना ही चाहिये तब उसका मतलब इससे अधिक कुछ नहीं होता और इससे कम भी कुछ नहीं होता। एकमात्र भगवत्कृपा ही वापस आने और स्वीकार करनेकी प्रक्रियाको तीव्र बनाती है। परन्तु यात्रा करनेवाली सत्ता, जीवकी ओर भी एक सचेतन सहयोगिताका, एक प्रारम्भिक स्वीकृतिका और एक सतत नया-नया रूप लेनेवाले प्रबल अनुरागका भाव भी अवश्य जागृत होना चाहिये।

यही भाव बाहरकी ओर मौलिक स्तरपर उस शक्तिको प्रकट करता है अथवा कमसे कम उसके स्थापित होनेमें सहायता करता है जो कि पहलेसे ही भीतरकी ओर और सूक्ष्मतर तथा उच्चतर स्तरमें विद्यमान रहती है एवं निरन्तर कार्य करती रहती है। यही उस लीलाका स्वरूप है, उन शर्तोंकी धारा है जिसके या जिनके अधीन खेल संपन्न किया जाता है। भगवत्कृपा सहमत और सचेतन सहयोगियोंके एक दलके अंदर और उसका आश्रय लेकर अवतरित होती और कार्य करती है– वे सहयोगी स्वयं भी उस कार्य करनेवाली दिव्य शक्तिके अंग और अंश बन जाते हैं।

जिस सत्यको मैं ले आ रही हूं वह पृथ्वीपर अभिव्यक्त होगा और आकार ग्रहण करेगा; कारण, यही पृथ्वीकी और जगत्की अपरिहार्य भवितव्यता है। समयका प्रश्न यहां संगत नहीं है। एक दृष्टिसे देखें तो जिस सत्यके विषयमें मैं यह कहती हूं कि वह अभिव्यक्त किया जायेगा वह इस समय भी पूर्णतः अभिव्यक्त हो गया है, संसिद्ध और स्थापित हो गया है; अब इसमें समयका कोई प्रश्न ही नहीं है। यह एक चेतनाके अंदर कालातीत है अथवा शाश्वत रूपसे विद्यमान है। उस कालातीत स्थिति तथा हम यहां नीचे जिसे जानते हैं उस कालगत स्थितिके बीच, एक प्रक्रिया, प्रकटीकरणकी एक लीला विद्यमान है।

इस खाईका परिमाण बहुत सापेक्ष है, नापनेवाली चेतनाके ऊपर निर्भर है, इसे नापनेके लिये मनुष्य जो गज लाता है उसके अनुसार यह खाई चौड़ी या पतली होती है। परन्तु समस्याका मूल तत्व यह नहीं है, मूल तत्व तो यह है कि सत्य वहां कार्य कर रहा है, स्थूल रूप ग्रहण करनेका प्रयास कर रहा है, बस मनुष्यमें उसे देखनेके लिये होनी चाहिये आंख और उसका स्वागत करनेके लिये होनी चाहिये आत्मा।

× × ×

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(४)

प्रश्न— 'मैं तुम्हारे साथ हूं' आपके इस कथनका ठीक-ठीक मतलब क्या है ? जब हम प्रार्थना करते हैं अथवा अपने अन्दर किसी समस्याके साथ संघर्ष करते हैं तब क्या वास्तवमें हमारी बात सुनी जाती है, सर्वदा, हमारे भीतर की अस्पष्टता और अपूर्णताके होनेपर भी, यहां तक कि हमारे अंदर विद्यमान अशुभ इच्छा और हमारी मूल-भ्रांतिके बावजूद भी सुनी जाती है ? और कौन सुनता है ? स्वयं आप ही जो हमारे साथ रहती है ?

और क्या यह आपका वह रूप होता है जो आपकी आपकी परात्पर चेतनामें रहता है, जो एक निर्वैयक्तिक भागवत शक्ति होता है, योग शक्ति होता है अथवा वह स्वयं आप ही है जो अपनी मौलिक चेतनाके साथ एक शरीरके अंदर हमारी माताजी हैं ? क्या यह कोई व्यक्तिगत उपस्थिति है जो हमारे प्रत्येक विचार और प्रत्येक कार्यको जानती है और वह कोई नामहीन शक्ति नहीं है ? क्या आप कृपा कर बतायेंगी कि किस तरह और किस रूपमें आप हमारे साथ रहती हैं ?

कहा जाता है कि आप और श्री अरविंद एक ही और अभिन्न चेतनाको अभिव्यक्त करते हैं, पर क्या श्री अरविंद का कोई व्यक्तिगत स्वरूप भी है और आपका भी कोई व्यक्तिगत स्वरूप है और क्या वे दोनों स्वरूप पृथक्-पृथक् हैं और अपना-अपना निजी कार्य करते हैं ?

उत्तर— मैं तुम्हारे साथ हूं क्योंकि मैं 'तुम' हूं और 'तुम' मैं हो।

'मैं तुम्हारे साथ हूं' - इस बातके बहुतेरे- अनगिनत अर्थ हैं क्योंकि सभी स्तरोंपर, सभी लोकोंमें, परात्पर चेतनासे ले कर नीचे अत्यन्त स्थूल स्तर तकमें मैं तुम्हारे साथ हूं। यहां, पांडिचेरीमें, मेरी चेतनाके अंदर श्वास-प्रश्वास लिये बिना तुम जी ही नहीं सकते। वह चेतना सूक्ष्म भौतिक स्तरमें, प्रायः स्थूल रूपमें, यहांके वातावरणमें ओत प्रोत हो रही है और यहांसे दस किलोमीटर (लगभग ६-७ मील) तक, यहांकी झील तक फैली हुई है। फिर स्थूल-प्राण-स्तरमें, फिर मानसिक स्तरमें तथा अन्य उच्चतर लोकोंमें मेरी चेतना सर्वत्र अनुभूत हो सकती है। जब मैं यहां पहले-पहल आयी तब मैंने श्री अरविंदके वातावरणका अनुभव स्थूल रूपमें, प्रायः दस मीलकी दूरीपर, दस किलोमीटर नहीं बल्कि दस सामुद्रिक मील (लगभग $11\frac{1}{2}$ मील) की दूरीपर अनुभव किया था। वह अचानक ही अनुभूत हुआ और वह एक बड़ा ही ठोस, पवित्र, ज्योतिर्मय और हलका वातावरण था, इतना हलका कि वह तुमको ऊपर उठा ले।

तुम सब जानते ही हो कि बहुत दिन पहले श्री अरविंद ने आश्रममें सर्वत्र एक चेतावनीके रूपमें यह संदेश लगवा दिया था कि 'हमेशा ऐसे व्यवहार करो मानों श्री माताजी तुम्हें देख रही हों, क्योंकि सचमुच वे सदा उपस्थित हैं।' यह महज एक शब्द नहीं है, बस, शब्द ही नहीं है बल्कि यह एक सत्य है। मैं बहुत वास्तविक रूपमें तुम्हारे साथ उपस्थित रहती हूं और जिन लोगोंकी सूक्ष्म दृष्टि है वे मुझे देख सकते हैं।

सामान्य रूपसे मेरी शक्ति सर्वदा ही कार्य करती रहती है, तुम्हारी सत्ताके मनोवैज्ञानिक तत्वोंको नये संबंधोंमें पुनः व्यवस्थित करनेके लिये उन्हें निरन्तर इधर-उधर हटाती रहती है, तुम्हारी प्रकृतिके विभिन्न पक्षोंका वर्णन तुम्हारे सामने करती रहती है जिससे कि तुम यह देख सको कि तुम्हें किस चीजको परिवर्तित, विकसित और परिवर्जित करना चाहिये।

परन्तु इसके अतिरिक्त भी, मेरे और तुम्हारे बीच, जो लोग श्री अरविंद और मेरी शिक्षाकी ओर मुडे हैं उन सबके बीच, एक प्रकारका विशेष व्यक्तिगत संबंध विद्यमान है,- यह अच्छी तरह जानी हुई बात है कि यहां दूरीका कोई सवाल नहीं है, तुम फ्रांसमें हो सकते हो, तुम संसारके दूसरे छोर पर हो सकते हो अथवा पांडिचेरीमें हो सकते हो, वह संबंध सर्वदा ही सच्चा और सजीव होता है। और प्रत्येक समय एक पुकार आती है, प्रत्येक समय मुझे जाननेकी आवश्यकता होती है जिससें कि मैं कोई शक्ति, अंतः प्रेरणा संरक्षण या कोई दूसरी चीज भेज सकूं; सहसा एक प्रचारकी खबर मेरे पास पहुंचती है और मैं आवश्यक कार्य कर देती हूं। ये खबरें स्पष्ट ही मेरे पास किसी भी क्षण आती हैं, और तुम लोगोंने मुझे बहुत बार देखा होगा कि मैं हठात् एक वाक्यके बीचमें या एक काम के बीचमें रुक जाती हूं; इसका कारण यह होता है कि कोई

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चीज, कोई संवाद मेरे पास आता है और मैं एकाग्र हो जाती हूं।

जिन लोगोंको मैंने शिष्य रूपमें स्वीकार किया है, जिन लोगोंसे मैंने 'हां' कह दिया है, उन लोगोंके साथ इस संबंधसे भी अधिक कुछ होता है, उनके साथ मेरी एक अंशविभूति रहती है। जब कभी आवश्यक होता है, यह अंश-विभूति मुझे सावधान कर देती है और जो कुछ घटित होता है उसे बता देती है। निस्संदेह, मैं निरन्तर सूचनाएं ग्रहण करती रहती हूं, पर ये सबकी सब मेरी सक्रिय स्मृतिमें अंकित नहीं होतीं; अंकित होने पर तो वहां बाढ ही आ जाती। भौतिक चेतना एक प्रच्छन्नकी भांति कार्य करती है। चीजें एक सूक्ष्म लोकमें अंकित होती है, वे वहां प्रच्छन्न स्थितिमें पडी रहती हैं, जैसे किसी संगीतका एक 'रेकार्ड' बिना बजे पडा रहता है उसी तरहकी कोई चीज वे होती हैं।। जब मुझे अपनी भौतिक चेतनामें जाननेकी आवश्यकता होती है तब मैं सूक्ष्म-भौतिक स्तरके साथ सम्पर्क स्थापित करती हूं और फिर 'रेकार्ड' घूमना आरम्भ कर देता है। तब मैं देखती हूं कि चीजें कैसी हैं, कालके अंदर उनका कैसा विकास हुआ है और उनका यथार्थ परिणाम क्या है?

और, यदि किसी कारण वश तुम मुझे पत्र देते और मेरी सहायता मांगते हो तथा मैं यह उत्तर देती हूं 'मैं तुम्हारे साथ हूं,' तो इसका मतलब यह होता है कि तुम्हारे साथका मेरा संपर्क सक्रिय हो गया है, और तुम कुछ समयके लिये, जितने समयकी आवश्यकता होती है उतने समयके लिये सक्रिय चेतनामें आ जाते हो।

और तुम्हारे तथा मेरे बीचका यह संपर्क कभी भंग नहीं होता। ऐसे लोग हैं जिन्होंने बहुत दीर्घकालसे आश्रम छोड दिया है और विद्रोहकी स्थितिमें छोडा है, और फिर भी मैं उनके विषयमें खबर मंगाती हूं और उनकी देख-रेख करती रहती हूं। मैं कभी तुम लोगोंका परित्याग नहीं करती।

सच पूछो तो प्रत्येक व्यक्तिकी जिम्मेदारी मैं स्वयं अपने ऊपर लिये रहती हूं, उन लोगोंकी भी जिनसे जीवनमें महज एक क्षणके लिये ही मुलाकात हुई है।

अब एक बात याद रखो। श्री अरविंद और मैं बस एक और अभिन्न चेतना हैं, एक और अभिन्न व्यक्ति हैं। जब यह शक्ति या यह उपस्थिति, जो अभिन्न है, तुम्हारी व्यक्तिगत चेतनाके भीतरसे गुजरती है केवल तभी वह आकार ग्रहण करती है, एक बाह्य रूप लेती है जो तुम्हारे स्वभाव, तुम्हारी अभीप्सा, तुम्हारी आवश्यकता, तुम्हारी सत्ताके विशिष्ट झुकावके अनुसार अलग अलग होता है। तुम्हारी व्यक्तिगत चेतना एक छन्नेके समान होती है, अथवा, यदि हम ऐसा कह सकें तो, एक निर्देशक सूईकी तरह होती है, वह चुनाव करती है, अनंत दिव्य संभावनाओंमेंसे किसी एक संभावनाको निश्चित करती है।

वास्तवमें भगवान् प्रत्येक व्यक्तिको ठीक वही चीज देते हैं जिसकी वह उनसे आशा करता है। अगर तुम विश्वास करते हो कि भगवान् तुमसे बहुत दूर और कठोर हैं तो वह तुमसे बहुत दूर और कठोर हो जायेंगे, क्योंकि तुम्हारी चरम भलाईके लिये यह आवश्यक होगा कि तुम भगवान्‌के क्रोधको अनुभव करो; वह कालीके उपासकोंके लिये काली बन जायेंगे तथा भक्तोंके लिये आनन्दमय; और ज्ञानके जिज्ञासुओंके लिये वह सर्व ज्ञानमय हो जायेंगे और मायावादियोंके लिये परात्पर निर्वैयक्तिक ब्रह्म; वह अनीश्वरवादीके लिये अनीश्वर और प्रेमीके लिये प्रेम बन जायेंगे। फिर जो लोग उन्हें प्रत्येक क्रिया-कलापमें और प्रत्येक मुहूर्तमें अपने अन्तरस्थ पथ प्रदर्शकके रूपमें अनुभव करेंगे उनके लिये वह सदय और घनिष्ठ आत्मीय बन जायेंगे, एक ऐसा मित्र बन जायेंगे जो सर्वदा विश्वासपात्र हो, सर्वदा सहायता करनेके लिये तैयार हो। और यदि तुम विश्वास करो कि वह सब कुछ मिटा सकते हैं तो वह तुम्हारे सभी दोषोंको, तुम्हारी सभी भूलभ्रान्तियोंको अथक भावसे मिटाते रहेंगे और तुम प्रत्येक क्षण उनकी असीम करुणाका अनुभव करते रहोगे। भगवान् सचमुच वही है जो कि तुम गंभीरतम अभीप्सामें उनके होनेकी आशा रखते हो।

और जब तुम इस चेतनामें प्रवेश करते हो जहां तुम महज एक ही दृष्टिमें सब चीजोंको देख पाते हो, भगवान् और मनुष्यके बीचके असंख्य संबंधोंको देख पाते हो तब तुम देखते हो कि अपने सम्पूर्ण ब्योरेमें यह सब कितना अद्भुत है! तुम मनुष्य जातिके इतिहास पर दृष्टिपात कर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सकते हो और तब तुम देखोगे कि मनुष्योंने जितना भगवान् को समझा है, जो कुछ उनसे कामना और आशाकी है, जैसा उनका स्वप्न देखा है उसके अनुसार वह कितने विकसित हुए हैं और कैसे वह जड-वादियोंके लिये तो जडमय हो गये तथा जैसे-जैसे मानव-चेतना विस्तारित होती गयी वैसे-वैसे उसीके अनुसार वह भी कैसे दिन-दिन बढते गये और अधिक समीपस्थ तथा अधिकाधिक ज्योतिर्मय बनते गये। प्रत्येक व्यक्ति चुनावके लिये स्वतंत्र है। संसारके समूचे इतिहासके भगवान्के साथ मनुष्यके संघर्षोंका जो यह अंतहीन वैषम्य है उसकी परिपूर्णता एक अनिर्वचनीय आश्चर्य है। और यह सब एक साथ भगवान्की सम्पूर्ण अभिव्यक्तिका सहज एक क्षण ही है।

भगवान् तुम्हारी अभीप्साके अनुसार तुम्हारे साथ रहते हैं। स्वभावतः ही इसका मतलब यह नहीं है कि वह तुम्हारी बाह्य प्रकृतिकी मनमौजके अनुसार बदलते रहते हैं,- यह मैं तुम्हारी सत्ताके सत्यकी बात कह रही हूं। और फिर भी कभी-कभी वह तुम्हारी बाहरी अभीप्साके अनुसार भी अपना रूप गढा करते हैं और यदि, भक्तोंकी तरह तुम बारी-बारीसे विरह और मिलन, आनन्द और निराशाकी स्थितिमें निवास करो तो भगवान् भी जैसा तुम विश्वास करोगे उसके अनुसार तुमसे अलग हो जायेंगे और तुम्हारे साथ युक्त हो जायेंगे। अतएव हमारा मनोभाव यहां तक कि बाहरी मनोभाव भी बहुत महत्त्व रखता है।

लोग यह नहीं समझते कि श्रद्धा कितनी महत्त्वपूर्ण है, श्रद्धा कैसी आश्चर्यजनक चीज है, आश्चर्योंकी जननी है! यदि तुम प्रत्येक क्षण यह आशा बनाये रखो कि तुम्हें ऊपर उठाया जायेगा, भगवान्की ओर ऊपर खींच लिया जायेगा तो भगवान् तुम्हें ऊपर उठानेके लिये आ जायेंगे और वह एकदम तुम्हारे पास, अत्यधिक निकट, सदा समीप बने रहेंगे।

\+ \+

(५)

...... वृक्ष इतने सजीव, इतने बोधक्षम होते हैं कि वे लगभग पशुओंकी तरह मित्र बन सकते हैं, बल्कि मनुष्यकी तरह भी। जब हम ऐसा अनुभव करते हैं मानों हम अपने घरमें आ गये हों, वहां हम अपनेको निश्चिन्त, सुरक्षित और बलशाली अनुभव करते हैं।

मैं एक उदाहरण दूंगी। हमारे एक बगीचेमें एक पुराना आमका पेड था। वह बहुत पुराना था, उसकी पत्ती झड गयी थीं और वह सूख रहा था, जर्जरित हो रहा था और ऊपरसे देखनेमें मर रहा था। प्रत्येक आदमीका मत था कि उसे काट डाला जाए और फूल या तरकारी लगानेके लिये जगह साफ सुथरी कर ली जाय। मैंने वृक्षकी ओर नजर दौडायी। अकस्मात् उसके सूखे छिलकेके अंदर, एकदम भीतरी भागमें, पतली और धीमी ज्योतिका एक स्तम्भ मैंने देखा, वह ज्योति हरे रंगकी थी और ऊपर उठ रही थी, वह बहुत ही प्राणवंत वस्तु थी। मैं पेडकी चेतनाके साथ एक हो गयी और उसने मुझसे कहा कि मुझे काटने की आज्ञा मत दो। वह वृक्ष आज भी बचा हुआ है और प्रायः अच्छी स्थितिमें ही है।

अपने बचपनमें, जब मेरी उम्र मुश्किलसे दससे कुछ ऊपर होगी, मैं बराबर एक जंगलमें जाया करती थी जो पेरिससे बहुत दूर नहीं था (उसका नाम था Bois de fontoin bleau-फौंतैंन ब्लोका जंगल) वहां बहुत बडे-बडे बलूत (oak) के पेड थे जो शायद सैंकडों वर्षके थे। और यद्यपि उन दिनोंमें ध्यानकी कोई बात नहीं जानती थी, मैं अकेली चुपचाप बैठ जाती और अपने चारों ओर सजीवताका, प्रत्येक वृक्षमें रहनेवाली किसी सजीव वस्तुका अनुभव करती और उसके कारण मेरे अंदर बराबर एकसी स्वस्थता और प्रसन्नताका बोध उत्पन्न होता।

एक दूसरा उदाहरण एक दूसरे प्रकारके तादात्म्यका स्वरूप बतलायेगा। यह एक ऐसा अनुभव है जिसकी चर्चा मैं कई बार कर चुकी हूं। मैं अंतर्मुखी होकर बैठी थी और ध्यान कर रही थी। मुझे ऐसा लगा कि मेरा भौतिक शरीर विलीन या परिवर्तित हो रहा है: वह अधिकाधिक विशाल हो रहा था, अपने मानवीय स्वरूपको खो रहा था और धीरे-धीरे एक गोलेका आकार ले रहा था। अब हाथ, पैर, सिर वगैरह कुछ नहीं था। मैंने अनुभव किया कि मैं पृथ्वी बन गयी हूं। मैं आकार और वस्तुस्थितिमें भी अब पृथ्वी बन गयी थी और सभी पार्थिव वस्तुएं मेरे अंदर थीं, पशु और मनुष्य मेरे अंदर रहते और चलते फिरते थे। पेडपौधे और यहां तक कि निर्जीव वस्तुएं भी मेरी सत्ताके अंश थे, मेरे शरीरके अंग-प्रत्यंग थे। मेरे अंदर मानों पार्थिव चेतना मूर्त्तिमती हो उठी थी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

परन्तु मुख्य बात है कहीं भी और सर्वत्र ही इस व्यक्तिगत चेतनाको बनाये रखना और साथ ही उच्चतर, विश्वगत और परात्पर, सर्वोच्च चेतनाको भी बनाये रखना, अधिकसे अधिक मात्रामें एक साथ ही दोनों अवस्थाओंमें सचेतन बने रहना।

मुझे १८ से २० वर्षकी उम्रके बीच किसी समय भगवान्‌के साथ सतत और सचेतन एकत्वकी अनुभूति प्राप्त हुई थी और वह केवल मेरे अपने प्रयासके द्वारा ही प्राप्त हुई थी, मुझे सहायता देनेवाला एकदम कोई मनुष्य नहीं था, यहां तक कि पुस्तकें भी नहीं थीं। जब मुझे वह चीज मिल गयी तब उसके कुछ दिनों बाद मेरे हाथोमें आया विवेकानन्दका 'राजयोग'। वह मुझे एक ऐसी अद्‌भुत वस्तु प्रतीत हुआ कि मैंने अनुभव किया कि आखिरकार कोई व्यक्ति मुझे कुछ चीज तो बता सका। इस तरह कुछ महीनेमें मुझे वह चीज मिल गयी जिसे पानेमें शायद मुझे वर्षों लग जाते।

फिर एक आदमीसे मेरी मुलाकात हुई। मेरी उम्र लगभग २० या २१ वर्षकी थी। वह एक भारतीय थे और भारतसे गये हुए थे। उन्होंने मुझे गीताकी बात बतायी। एक गीताका अनुवाद था, अवश्य ही काफी बुरा अनुवाद था और उन्होंने मुझे उसे पढनेकी सलाह दी। और उन्होंने उसे समझनेकी मुझे कुंजी, अपनी कुंजी भी दी। उन्होंने कहा 'गीता पढो, यह रहा उसका अनुवाद जो बहुत अच्छा नहीं है।' परन्तु उन दिनों फ्रेंच भाषामें एक मात्र वही अनुवाद उपलब्ध था और मैं और कोई भाषा नहीं समझ सकती थी।

उस समय तक श्री अरविंदने गीताकी अपनी व्याख्या नहीं लिखी थी। उस व्यक्तिने मुझसे कहा 'गीता पढो और कृष्णको अंतर्यामी भगवान्, अंतरस्थ भगवान्‌का रूपक समझो।' बस, इतना ही उन्होंने मुझे बताया। फिर उन्होंने मुझसे यह भी कहा कि इस ज्ञानके साथ यह पुस्तक पढो कि गीतामें कृष्ण अंतर्यामी भगवान्‌का, जो भगवान् तुम्हारे अंदर हैं, उनका प्रतिनिधित्व करते हैं।' बस एक महीनेमें सारा कार्य पूरा हो गया।

२५ अगस्त १९५४

पुरुष–सूक्त

अर्थ, भावार्थ और स्पष्टीकरण

इसमें ऋग्वेद, वाजसनेयी यजुर्वेद, तैत्तिरीय सामवेद और अथर्ववेद इनमेंके सभी सूक्त देकर मन्त्रोंकी चरणसूची भी दी गई है।

(१) विश्वव्यापी विराट् पुरुष, (२) पृथ्वीपर सर्वत्र फैला हुआ 'मानवसमाजरूपी पुरुष' अथवा 'राष्ट्रपुरुष' और (३) 'मानव व्यक्तिरूप पुरुष' इनका आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक वर्णनके सम्बन्धसे सृष्टिका निर्माण, यज्ञीय जीवन, वेदोंका प्रकटीकरण, यज्ञचक्र परिवर्तन, परमात्मा-पुरुष और प्रकृति पदार्थोंकी उत्पत्ति इत्यादि विषयोंका भी विचार इस पुस्तकमें करके श्रीमद्‌भागवतके पुरुषसूक्तका भी अनुवाद दिया है।

(१) आप पुरुषसूक्त का पाठ रोज करते हैं परन्तु उसका अर्थ व गूढार्थ का ज्ञान न होनेसे मानवधर्मके श्रेष्ठ ज्ञानसे वञ्चित रहते हैं। जीव-जगत् और जगन्नाथ इसकी ठीक कल्पना देनेवाले इस सूक्तका केवल पाठ न करते हुए मण्डलके इस पुरुषसूक्तकी सहायतासे अपना जीवन बनायें और अपना जीवन उन्नत तथा विश्वव्यापी कीजिये।

मन्त्री— स्वाध्याय मण्डल, पोस्ट— 'स्वाध्यायमण्डल (पारडी)' [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रार्थना और अभीप्सा

श्री माताजी

*

नाना प्रकारकी प्रार्थनाएं होती हैं । एक प्रार्थना होती है बाहरी और भौतिक, महज शब्दोंको जबानी रट लिया जाता है और उन्हें बिना समझे यंत्रकी तरह दुहराया जाता है । इससे बहुत अधिक लाभ नहीं होता । पर, सामान्यतया, इसका परिणाम एक होता है, यह तुम्हें शान्त, अचंचल बना देता है । यदि तुम कुछ शब्दों, या स्वरोंको कुछ दिनों तक लगातार दुहराते रहो तो अंतमें वह तुम्हें एक प्रकारकी शान्तिकी अवस्थामें पहुंचा देता है । एक दूसरे प्रकारकी प्रार्थना है जो किसी इच्छाकी स्वाभाविक अभिव्यक्ति होती है, तुम कोई विशेष वस्तु चाहते हो और उसे तुम स्पष्ट रूपमें प्रकट करते हो। तुम किसी चीज या किसी अवस्थाके लिये प्रार्थना कर सकते हो, तुम किसी व्यक्तिके लिये या स्वयं अपने लिये भी प्रार्थना कर सकते हो।

फिर प्रार्थनाका एक और भी प्रकार है जिसमें प्रार्थना अभीप्साकी सीमा पर पहुंच जाती है और वहां दोनों मिल जाती हैं; वह एक सजीव अनुभवका अपने आप मूर्तिमान होना है; यह प्रार्थना तुम्हारी सत्ताकी गहराईसे उद्गत होती है, वह अपने जीवनमें उतारी हुई किसी आंतरिक चीजका उद्गार होती है; यह अनुभूतिके लिये कृतज्ञता प्रकट करना चाहती है, उसे जारी रखनेके लिये विनय करती है या कोई व्याख्या चाहती है । उस समय वह, जैसा कि मैंने कहा था, प्रायः एक अभीप्सा होती है । पर यह आवश्यक नहीं कि अभीप्सा शब्दोंका रूप ले ही; यह अगर शब्दोंका व्यवहार करती भी है तो उन्हें एक प्रकारके आह्वानका आकार प्रदान करती है ।

इस तरह तुम एक विशिष्ट अवस्थामें रहनेकी इच्छा करते हो । तुमने, उदाहरणार्थ, अपने अंदर एक ऐसी चीज देखी है जो तुम्हारे आदर्शके साथ मेल नहीं खाती, जो एक अंधकार या अज्ञानकी क्रिया है या यहां तक कि एक प्रकारकी अशुभ इच्छा है । तुम उसे बदली हुई देखना चाहते हो । तुम इस बातको शब्दोंमें प्रकट नहीं करते, बल्कि यह तुम्हारे अंदर एक लौकी भांति, स्वयं इस अनुभवकी ही सच्ची पुष्पांजलिके रूपमें उठती है तो विशाल और महान् होनेकी अधिक स्पष्ट और सुनिश्चित होनेकी कोशिश करती है । यह ठीक है कि यदि कोई उस अनुभवको स्मरण करने और लिख डालनेकी चेष्टा करे तो ये सब बातें शब्दोंमें व्यक्तकी जा सकती हैं । परन्तु स्वयं वह अनुभव, वह अभीप्सा, जैसा कि मैंने कहा है, एक लौ जैसी होती है जो ऊपर की ओर उठती है और अपने अंदर ठीक उसी चीजको धारण किये रहती है जिसे वह मांगती है ।

मैं कहती हूं कि 'मांगती है,' परन्तु वह क्रिया बिल्कुल ही वैसी नहीं होती जैसी कि किसी कामनाकी होती है; वह सचमुचमें एक लौ होती है, वह शुद्धि कारक संकल्पकी लौ होती है जो अपने केन्द्रमें उस लक्ष्यको लिये होती है जिसे वह चरितार्थ करना चाहती है । अपने किसी दोषको खोज निकालना तुम्हें उसे अधिक प्रगतिका, महत्तर आत्मानुशासनका, भगवान्की ओर अधिक आरोहण करनेका एक अवसर बनानेकी प्रेरणा प्रदान करता है । यह तुम्हारे भावी जीवनके लिये एक दरवाजा खोल देता है जिसे तुम अधिक स्पष्ट, और अधिक सच्चा बनाना चाहते हो; यह सब तुम्हारे अंदर एक घनीभूत शक्तिके रूपमें एकत्रित होता है और तुम्हें ऊपर आरोहण करनेके लिये जोरोंसे फेंक देता है । इसे शब्दोंमें व्यक्त करनेकी आवश्यकता नहीं होती । वास्तवमें यह एक लौ होती है जो ऊपरकी ओर जलती रहती है । यही सच्ची अभीप्सा है । साधारणतया प्रार्थना बहुत अधिक बाह्य वस्तु होती है; उसका संबंध किसी अत्यन्त सुनिश्चित लक्ष्यके साथ होता है । उसका सदा ही एक रूप होता है; क्योंकि स्वयं वह रूप ही यह बताता है कि प्रार्थना क्या चीज है ।

तुम्हें कोई अभीप्सा हो सकती है और तुम उसे एक प्रार्थनामें रूपान्तरित कर सकते हो, परन्तु स्वयं वह अभीप्सा उस प्रार्थनाकी परेकी चीज है । वह एक ऐसी चीज है जो बहुत आंतरिक होती है, अधिकतम आत्मविस्मृति पूर्ण होती है, जो कुछ वह होना या करना चाहती है बस उसी उद्देश्यमें, प्रायः उसके साथ एकाकार होकर रहती है । प्रार्थना बहुत ऊँचे दर्जेकी हो सकती है । तुम्हारी किसी विशेष कामनाकी पूर्तिके लिये एक अनुरोध होनेके बदले, भगवान्ने जो कुछ तुम्हारे लिये किया है या वह कर रहे हैं उसके लिये वह तुम्हारी कृतज्ञता और विनम्रताको व्यक्त कर सकती है । तुम अपने ही तुच्छ व्यक्तित्व और उसके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अहंकार पूर्ण हितोंमें ही संलग्न नहीं हो, तुम अपने अंदर और जगत्‌में भगवान्‌के तरीकोंकी कामना करते हो।

यह तुम्हें अभीप्साके किनारे पहुंचा देता है। क्योंकि अभीप्साके भी अनेक स्तर हैं और वह अनेक स्तरों पर प्रकट की जाती है। परन्तु अभीप्साका मूल केन्द्र चैत्य पुरुषमें है, वहीं पर अपने शुद्धतम रूपमें पायी जाती है, क्योंकि वहीं पर उसका मूल और उद्‌गम स्थान है। प्रार्थनाएं सत्ताके दूसरे, निम्नतर या गौण स्तरोंसे आती हैं। कहनेका तात्पर्य, भौतिक या स्थूल प्रार्थनाएं होती हैं; फिर चैत्य प्रार्थनाएं और आध्यात्मिक प्रार्थनाएं भी होती हैं।

इनमेंसे प्रत्येकका अपना अलग स्वरूप और अपना अलग मूल्य होता है। मैं फिर कहती हूं कि एक विशेष प्रकारकी प्रार्थनाएं होती हैं जो अत्यन्त स्वाभाविक और अत्यन्त कामना शून्य होती हैं, कहीं अधिक एक निवेदन या एक पुकारकी जैसी होती है, सामान्यतया यह स्वयं अपने लिये नहीं होती बल्कि कभी कभी भगवान्‌के सामने दूसरोंके लिये पैरवी करनेकी जैसी कोई चीज होती है। ऐसी प्रार्थना परम शक्तिशाली होती है। मैंने अनगिनत बार ऐसी प्रार्थनाको बातकी बातमें अपना अभीप्सित परिणाम उत्पन्न करते हुए देखा है।

इसका अर्थ है महान् श्रद्धा विश्वास, महान् उत्साह, महान् सच्चाई और साथ ही हृदयकी महान् सरलता, ऐसी चीज जो हिसाब नहीं लगाती, जो मोल-तोल या लेन-देन नहीं करती, पानेकी भावनाके साथ नहीं देती। अधिकांश प्रार्थनाएं निश्चित रूपसे देनेकी ही भावना रख कर की जाती हैं जिसमें कि मनुष्य पा सके। परन्तु मैं एक अधिक विरल प्रकारकी प्रार्थना की बात कह रही थी और वैसी प्रार्थनाएं भी अवश्य अस्तित्व रखती हैं। उनमें एक प्रकारसे भगवान्‌के प्रति कृतज्ञता प्रकट की जाती है, वे भगवान्‌के गुणों या कार्योंका बखान करनेवाले गीत या स्तोत्र होते हैं।

अतएव सार रूपमें यह कहा जा सकता है कि प्रार्थना सर्वदा शब्दोंसे बनी होती है। उन शब्दोंकी रचना करते समय उनके रचयिताकी चेतनाकी जो अवस्था होती है उसीके अनुसार उन शब्दोंका मूल्य अलग-अलग होता है। परन्तु प्रार्थना बराबर ही एक निर्मित वस्तु होती है। परन्तु मनुष्य बिना रचना किये ही अभीप्सा कर सकता है। और फिर प्रार्थनाके लिये एक व्यक्तिकी आवश्यकता होती है जिससे मनुष्य प्रार्थना करता है। अवश्य ही एक विशेष श्रेणीके लोग भी होते हैं जो विश्वके विषयमें ऐसी कल्पना करते हैं जिसमें भगवान्‌के लिये कोई स्थान नहीं होता (जैसे, फ्रांसके विख्यात वैज्ञानिक लाप्लास- Laplace) ऐसे लोगोंके लिये अपनेसे श्रेष्ठतर किसी सत्ताका अस्तित्व स्वीकार करनेकी संभावना नहीं जिससे वे प्रार्थना कर सकें या जिसकी ओर पथप्रदर्शन और सहायताके लिये ताक सकें।

उनके लिये प्रार्थना करनेका कोई प्रश्न ही नहीं उठता। परन्तु ऐसे लोग भी, भले ही वे प्रार्थना न करें अभीप्सा कर सकते हैं। वे भगवान्‌में विश्वास न करें, पर वे, उदाहरणके लिये; प्रगतिमें विश्वास कर सकते हैं। वे संसारके विषयमें यह कल्पना कर सकते हैं कि यह एक विकसनशील गतिधारा है, यह अधिकाधिक अच्छा बन रहा है, क्रमशः उन्नत हो रहा है, निरन्तर एक महत्तर परिपूर्णताकी ओर वर्द्धित हो रहा है। वे ऐसी प्रगतिको मांग सकते हैं, उसके लिये संकल्प और अभीप्सा कर सकते हैं; उन्हें भगवान्‌के लिये प्रतीक्षा करनेकी आवश्यकता नहीं। निःसंदेह अभीप्साके लिये विश्वासकी आवश्यकता होती है, पर यह आवश्यकता नहीं कि विश्वास साकार भगवान्‌में ही हो। परन्तु प्रार्थना सदा ही एक व्यक्तिके प्रति निवेदित होती है, ऐसे व्यक्तिके प्रति जो उसे सुनता है और उसे मंजूर करता है। यहीं पर उन दोनोंमें महान् विभेद है।

बुद्धिशाली व्यक्ति अभीप्साको स्वीकार करते हैं; पर प्रार्थनाको वे निम्नकोटिकी चीज समझते हैं, नासमझ लोगोंके लिये ही उसे उपयुक्त जानते हैं।

रहस्यवादी कहते हैं कि अभीप्सा करना एकदम ठीक है, पर तुम्हारी अभीप्सा यदि सुननेकी और पूरी करनेकी चीज है तब तुम्हें अवश्य प्रार्थना भी करनी चाहिये, तुम्हें जानना चाहिये कि कैसे प्रार्थना करनी चाहिये और किससे करनी चाहिये—और भगवान्‌के सिवा भला ऐसा दूसरा कौन है? अभीप्सा किसी व्यक्तिके प्रति करनेकी कोई आवश्यकता नहीं; अभीप्सा किसी व्यक्तिके प्रति नहीं की जाती, बल्कि चेतनाकी किसी स्थिति, किसी ज्ञान, किसी सिद्धिके प्रति की जाती है। प्रार्थना किसी व्यक्तिके संबंधको उसके साथ जोड देती है। प्रार्थना एक व्यक्तिगत चीज होती है और उसमें किसी व्यक्तिसे ऐसी कोई चीज मांगी जाती है जिसे केवल वही प्रदान कर सकता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

योगसाधनाका चुनाव

(श्री मां)

★

श्री अरविंद-योगकी साधना करनेका अर्थ है अपने आपको सर्वांगीण रूपमें रूपान्तरित करनेकी चेष्टा करना, अपने जीवनमें बस इसी एक उद्देश्यको सामने रखना, बस एक मात्र वही है, और कोई चीज नहीं। तुम यह अपने अंदर अनुभव करते हो कि तुम इसे चाहते हो या नहीं। यदि तुम नहीं चाहते तो तुम सदिच्छा, सेवा, समझदारी-का जीवन ले सकते हो; तुम अन्यान्य अनेक प्रकारसे कार्य कर सकते हो। परन्तु उसके और योग करनेके बीच बहुत बडा अंतर है।

योग करनेके लिये ज्ञान पूर्वक इसकी इच्छा करनी होगी, तुम्हें सबसे पहले यह जानना होगा कि यह क्या है— जानो कि यह क्या है और तब संकल्प करो। और जब एक बार तुमने संकल्प कर लिया तब तुम फिर न हिच-किचाओ। जब तुम इसे ग्रहण करते हो तब तुम्हें अच्छी तरह जानकर ही इसे लेना चाहिये कि तुम क्या कर रहे हो। जब तुम यह कहते हो कि "मैं योग करना चाहता हूं" तब तुम्हें जानना चाहिये कि तुम किस बातका निर्णय कर रहे हो। यही कारण है कि जब मैंने तुमसे इसकी चर्चा की थी तब मैंने इस चीजके इस स्वरूप पर बहुत अधिक जोर नहीं दिया था। मैंने निश्चय ही इस चीज (योग) के विषयमें बातचीत की है और संभवतः काफी मात्रामें भी की है— मैं यहां बोलनेके लिये हूं और तुम सुननेके लिये; परन्तु मेरा मतलब यह है कि साधारण रूपमें मैंने जो कुछ भी कहा हो, जब कोई व्यक्तिगत रूपसे मेरे पास आता है और कहता है कि मैं योग करना चाहता हूं, तभी मैं 'हां' या, यदि आवश्यक हो तो 'ना' कहती हूं। ऐसे व्यक्ति-योंके लिये बातें अलग हो जाती हैं, जीवनकी अवस्थाएं, विशेषकर आंतरिक चीजें और अवस्थाएं भिन्न प्रकारकी हो जाती हैं।

यहां सर्वदा ही एक चेतना विद्यमान रहती है और वह तुम्हारी स्थितिको सुधारनेके लिये कार्य करती रहती है; निरन्तर वह तुम्हें उन बाधाओंके सम्मुख उपस्थित करती रहती है जो तुम्हें उन्नति करनेसे रोकती हैं, वह तुम्हारे सिरको तुम्हारी ही भूलों और अंधताओंसे टकरा देती है। परन्तु यह बात केवल उन्हीं लोगोंके विषयमें घटित होती है जिन्होंने योग करनेका निश्चय किया है। दूसरोंके लिये वह चेतना प्रगति करानेवाली एक ज्योति, एक ज्ञान, एक शक्तिके रूपमें काम करती है जिससे कि तुम अपनी अधिक से अधिक क्षमताओंको आयत्त कर सको, तुम अधिकसे अधिक अनुकूल वातावरणमें, जहां तक संभव हो वहां तक अपने आपको विकसित कर सको, परन्तु वह तुमको चुनाव करनेके लिये पूर्णरूपेण स्वतंत्र छोड देती है।

तुम्हारा निर्णय तुम्हारे अंतरसे आना चाहिये। जो लोग ज्ञान पूर्वक योग करने लिये आते हैं और यह जानते हैं कि योग क्या है, उन सभी लोगोंको जीवनकी कुछ ऐसी अव-स्थाओंको स्वीकार करना पडता है जो अन्य लोगोंकी जीवनकी अवस्थाओंसे एकदम भिन्न होती हैं— बाहरमें संभवतः दोनोंके बीच कोई भेद न भी हो पर भीतरमें एक चौडी खाई होती है। उस शक्तिमें एक प्रकारकी स्वेच्छा-चारिता का भाव है जो योगपथसे तनिक भी हटने नहीं देता; भूलोंको करते ही वे तुरत ऐसे परिणामोंके साथ दिखायी देने लगती हैं कि फिर कोई अपनेको धोखा नहीं दे सकता और सारी बातें ही बडा गंभीर रूप धारण कर लेती हैं।

तुम सभी, बच्चो, मैं तुम्हें बता दूं- मैं बहुत बार तुमसे कह चुकी हूं और फिर दुहराती हूं कि तुम एक असाधारण स्वतंत्रताके अन्दर निवास कर रहे हो। बाहरमें कुछ थोडेसे प्रतिबन्ध लगाये गये हैं, क्योंकि, हम बहुतसे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लोग हैं और सारी पृथ्वी हमारे अधिकारमें नहीं है इस लिये, कुछ हद तक हमें किसी अनुशासनके अधीन अपने आपको रखना ही पडता है जिससे कि अत्यधिक अव्यवस्था न आ जाय; परन्तु आंतरिक रूपमें तुम एक अद्‌भुत स्वाधीनताके अंदर निवास करते हो, कोई सामाजिक बंधन नहीं, कोई नैतिक प्रतिबंध नहीं, कोई बौद्धिक संयम नहीं, कोई बंधा-बंधाया सिद्धान्त नहीं, कोई चीज नहीं, है बस एक मात्र ज्योति। अगर तुम इससे लाभ उठाना चाहो तो तुम लाभ पाओगे; अगर तुम न चाहो तो इससे लाभ न उठानेके लिये स्वतंत्र हो।

परन्तु जिस दिन तुम चुनाव कर लेते हो, और जब तुम उसे पूर्ण सच्चाईके साथ करते हो और तुम अपने अंदर एक यथार्थ निर्णयको अनुभव करते हो तब बातें, जैसा कि मैं कह चुकी हूं, एकदम भिन्न हो जाती हैं। बस हमारे सामने प्रकाश है और अनुसरण करनेके लिये, सीधे चले जानेके लिये रास्ता मौजूद है, हमें जरा भी इधर-उधर नहीं मुडना चाहिये। यह पथ किसीको धोखा नहीं देता और न कोई इसे धोखा दे सकता है। तुम्हें जान रखना चाहिये कि योग सहज खिलवाड नहीं है। जब तुम इसे चुनते हो तब तुम्हें यह जानना चाहिये कि तुमने क्या किया है। और जब तुमने अपना रास्ता चुन लिया है तब तुम्हें उस पर डटे रहना चाहिये। अब तुम्हें हिचकिचानेका अधिकार नहीं। अब तुम्हें आगे बढना ही होगा। बस, इतनी ही है बात।

परन्तु मैं कमसे-कम जो तुमसे आशा रखती हूं वह है सभी कार्योंको अच्छी तरह करनेकी इच्छा रखना, उन्नति करनेके लिये प्रयास करना, जीवनमें साधारण मनुष्योंसे कुछ कुछ अधिक अच्छा बननेकी कामना करना। तुम ऐसी अवस्थाओंमें लालित-पालित हुए हो, बडे हुए हो, जो असाधारण रूपसे ज्योति पूर्ण, चैतन्ययुक्त, सामञ्जस्य पूर्ण और शुभेच्छासे ओतप्रोत हैं। और इसके बदलेमें यह उचित है कि तुम पृथ्वी पर कुछ अंशमें उस ज्योति, सामञ्जस्य और शुभेच्छाकी अभिव्यक्ति बनो। यही तुम्हारे लिये ईमानदारीकी बात होगी।

मनुष्य योग, रूपान्तरका योग- जो सभी कामोंमें अत्यंत कठिन काम है- केवल तभी कर सकता है जब कि वह अनुभव करे कि वह यहां, इस पृथ्वी पर, केवल इसी के लिये है और उसे अन्य कोई काम नहीं करना है, यही उसके अस्तित्वका एकमात्र कारण है। यदि तुम्हें कठिन परिश्रम करना पडे, दुःख झेलना पडे, संघर्ष करना पडे तो भी कोई परवा नहीं; यदि तुम कहो, "बस यही और अन्य कुछ भी नहीं," - तब बात दूसरी है। अन्यथा मैं तुमसे कहती हूं; बराबर प्रसन्न रहो, सर्वदा अच्छे बने रहो; 'अच्छे बने रहो' का मतलब है, अधिकाधिक समझदार बनो, जानो कि तुम अद्‌भुत अवस्थाओंमें रहकर बडे हो रहे हो, साधारण जीवनसे एक अधिक ऊँचा, अधिक महान् और अधिक सच्चा जीवन यापन करनेका प्रयास करो तथा इस चेतना, इस ज्योति तथा इस सदाशयताके कुछ अंशको जगत्‌में प्रकट होने दो।

× × ×

तुम किसी व्यक्ति और अहंकारपूर्ण उद्देश्यसे पूर्णता प्राप्त करनेकी कोशिश नहीं करते, बल्कि भगवान्‌को अभिव्यक्त करनेके उद्देश्यसे करते हो, इसका तात्पर्य है, अपना सब कुछ भगवान्‌की सेवामें लगा देना। तुम व्यक्तिगत रूपसे अपने आपको पूर्ण बनानेकी इच्छासे, महज अपने लिये योग नहीं करते, वरन् जो भागवत कार्य करना यहाँ अभिप्रेत है उसके लिये, भागवत इच्छाको परिपूर्ण करनेके लिये करते हो।

जब तक तुम्हारे अंदर कोई व्यक्तिगत आकांक्षा है, कोई व्यक्तिगत कामना, कोई अहंकारपूर्ण इच्छा है, तब तक तुममें एक प्रकारका मिश्रण है, वह भागवत संकल्पकी विशुद्ध अभिव्यक्ति नहीं है। एकमात्र महत्वपूर्ण वस्तु है भगवान्, उनकी इच्छा, उनकी अभिव्यक्ति और उनका प्रकाश। तुम उसीके लिये हो, तुम वही हो और इससे भिन्न अन्य कोई चीज नहीं हो। अगर तुम्हारे अन्दर "मैं" का, 'अहं' का, पृथक् व्यक्तित्वका बोध विद्यमान है तब इसका मतलब है कि तुम अभी भी वह चीज नहीं हो जो तुम्हें होना चाहिये। मैं यह नहीं कहती कि यह बात आनन-फाननमें की जा सकती है, बल्कि यह कहती हूं कि इस विषयका सत्य यही है।

क्योंकि इस स्तर पर, आध्यात्मिक स्तर पर, बहुत अधिक लोग— सच पूछो तो जो लोग आध्यात्मिक जीवन ग्रहण करते हैं उनमेंसे प्रायः सबके सब लोग— व्यक्तिगत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कारणोंसे, सब प्रकारके व्यक्तिगत कारणोंसे ही योग करते हैं; कुछ लोग जीवनसे ऊकता जानेके कारण, कुछ लोग दुःखी होनेके कारण, कुछ दूसरे अधिक ज्ञान पानेकी इच्छा होनेके कारण, फिर कुछ दूसरे आध्यात्मिक रूपसे महान् बननेकी कामना होनेके कारण, फिर कुछ और लोग ऐसी चीजें सीखनेकी चाह होनेके कारण, योग करते हैं जिन्हें वे दूसरोंको सिखा सकें अर्थात् गुरु बननेकी आकांक्षासे योग करते हैं और इस तरह योग करनेके हजारों व्यक्तिगत कारण होते हैं। परन्तु ऐसे लोग बहुत नहीं होते जो अपने आपको भगवान्के हाथोंमें दे देनेका सीधा सा कार्य-इसकी पूरी पवित्रता और अवान्छाको बनाये रख कर-करें जिससें कि भगवान् हमें अपना लें और वह अपनी इच्छाके अनुसार हमारा व्यवहार करें। ऐसा करने पर तुम सीधे अपने लक्ष्य पर पहुंच जाते हो और भूल करनेका खतरा कभी नहीं उठाते। परन्तु अन्य सभी उद्देश्योंमें मिलावट होती है, उन पर अहंकारकी छाप होती है और वे तुम्हें इधर-उधर तथा तुम्हारे लक्ष्यसे बहुत दूर ले जा सकते हैं।

इस बोधका होना ही सर्वोत्तम भाव है कि तुम्हारे अस्तित्वका एकमात्र कारण, तुम्हारा एकमात्र उद्देश्य है भगवान्के प्रति सर्वांगीण रूपसे, संपूर्ण रूपसे परिपूर्ण आत्म-निवेदन करना, इस हद तक कर देना कि तुम अपने और भगवान्के बीच विभेद करनेमें असमर्थ हो जाओ, तुम पूर्णतः अखंडतः भगवान् ही बन जाओ और तुम दोनोंके बीच किसी भी प्रकारकी कोई व्यक्तिगत प्रतिक्रिया न घुसने पाये। और केवल यही वह मनोभाव है जिसके सहारे तुम प्रत्येक चीजसे, यहां तक कि स्वयं अपने आपसे भी— क्योंकि सभी खतरोंमें बडेसे बडा खतरा वह होता है जो स्वयं अपनी आत्मासे, अपने अहंकारपूर्ण आत्मासे आता है- जीवनमें सुरक्षित रहते हुए निर्विघ्न उन्नति कर सकते हो।

व्यवस्था और अनुशासन

(श्री मां)

★

(१)

तुम्हें अपने विषयमें सचेतन होना होगा, प्रत्येक छोटी-मोटी बातके विषयमें सचेतन होना होगा। तुम जिसे अपना 'मैं' कहते हो उसे तुम्हें अपने चैत्य केन्द्र, अपनी सत्ताके भागवत केन्द्रके इर्द-गिर्द व्यवस्थित करना होगा जिससें कि तुम एक स्वतंत्र, सुसंबद्ध और पूर्ण सचेतन सत्ताको अधिकृत कर सको; चूंकि यह केन्द्र भगवान्के प्रति पूर्ण समर्पित है इसलिये यदि सभी अंग प्रत्यंग इसके चारों ओर सुसामञ्जस्य रूपसे व्यवस्थित हों तो वे भी भगवान्के प्रति समर्पित हो जाते हैं। इस तरह, जब भगवान्की इच्छा होती है, जब समय आ जाता है, जब व्यक्तीकरणकी क्रिया पूरी हो जाती है, तब भगवान् तुम्हारे अहंको अपने अंदर गल जाने देते हैं जिसमें कि तुम केवल भगवान्के लिये ही अपना अस्तित्व रख सको। परन्तु इसका निर्णय स्वयं भगवान् करते हैं। तुम्हें आरम्भिक सभी कार्योंको पूरा कर लेना चाहिये, एक ऐसी सचेतन सत्ता बन जाना चाहिये जो ऐकांतिक तथा संपूर्ण रूपसे भगवान्के चारों ओर केन्द्रित हो एवं उन्हींके द्वारा परिचालित होती हो। जब तुम्हारा अहंकार तुम्हारे भीतरसे एक पूर्ण व्यक्तिको गठित कर डालनेका अपना काम पूरा कर ले, जब वह कार्य पूरे रूपमें और संपूर्ण सम्पन्न हो जाय, तब तुम भगवान्से कह सकते हो "यह देखो, अब मैं तैयार हो गया हूं; क्या तुम मुझे चाहते हो?" भगवान् साधारणतया कहते हैं "हां" तब प्रत्येक चीज कार्यान्वित हो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जाती है, प्रत्येक चीज संपन्न हो जाती है। तुम भगवान्‌के कार्यके लिये एक सच्चा यंत्र बन जाते हो। परन्तु सबसे पहले यंत्रका निर्माण करना आवश्यक है।

तुम्हें स्कूल भेजा जाता है, तुम्हें कहा जाता है कि तुम (मानसिक और शारीरिक) दोनों प्रकारकी कसरतें करो; क्या तुम यह समझते हो कि यह सब तुम्हें महज तकलीफ में डालनेके लिये ही कहा जाता है ? नहीं, यह सब इस लिये कहा जाता है कि तुम्हारे लिये एक ऐसी परिस्थिति अत्यन्त आवश्यक है जिसमें तुम अपने आपको गढना सीख सको। यदि तुम व्यक्तित्व गठनके, सर्वांगपूर्ण गठनके इस कार्यको, स्वयं अपने आप, एक कोनेमें एकदम अकेले रह-कर करनेकी कोशिश करते तो तुमसे तब तक कुछ भी न कहा जाता जब तक कि तुम इसे न कर लेते; परन्तु यह सब संभव नहीं कि तुम इसे कर सको, कोई एक भी बच्चा इसे नहीं कर सकेगा, वह इसे जान भी नहीं सकेगा कि इसे कैसे किया जाता है अथवा कहांसे इसे आरम्भ किया जाता है।

अगर किसी बच्चेको यह न सिखाया जाय कि कैसे जीवन यापन किया जाता है तो वह जीवन यापन कर-नेमें समर्थ नहीं हो सकता, वह यह सीख ही नहीं सकता कि कोई काम कैसे किया जाता है। अत्यंत आरम्भिक क्रियाएं भी वह तब तक नहीं कर पाता जब तक कि उसे सिखाया नहीं जाता। अतएव किसीको यदि अपने व्यक्ति-त्वका गठन करनेके हेतु बिना किसी सहायताके समस्त अनुभवोंमेंसे गुजरना पडे तो वह अस्तित्वमें आनेसे बहुत पहले ही मर जायेगा। यही है उपयोगिता, जिन्हें अनुभव मिला था और जो तुमसे यह कहते हैं कि " यदि तुम तेजीसे आगे बढना चाहो तो आओ, यह करो, वह करो, इस तरह करो, उस तरह करो, पढो, अध्ययन करो, स्कूल-में, खेलके मैदानमें जाकर अपने पाठ सीखो। '' एक बार जब तुम रास्ते पर लग गये तब फिर, यदि तुममें प्रतिभा है तो, तुम अपनी पद्धति स्वयं ढूंढ सकते हो परन्तु आर-म्भमें तुम्हें यह जानना आवश्यक है कि तुम्हें अपने पैरों पर कैसे खडा होना चाहिये और कैसे चलना चाहिये। एक दम अपने ही बल पर चलना आसान नहीं है। यही कारण है कि मनुष्यको शिक्षाकी आवश्यकता होती है।

(२)

कुछ बच्चे ऐसे होते हैं जो बडे ही अव्यवस्थित होते हैं। वे नहीं जानते कि चीजें कैसे साफ सुथरी रखी जाती हैं। वे यह भी नहीं जानते कि चीजें कैसे रखी जाती हैं। वे या तो उन्हें खो देते हैं या नष्ट कर देते हैं। इसके कई कारण होते हैं। सबके पहले अधिकांश क्षेत्रोंमें इसका अर्थ यह होता है कि बच्चेमें पर्याप्त जीवनी-शक्ति नहीं है। उसका प्राण-पुरुष इतना अधिक बलवान नहीं है कि वह बाहरी वस्तुओंकी देख-रेख कर सके। दूसरा कारण यह हो सकता है कि उसे भौतिक जीवनमें रस नहीं मिलता; उसकी रुचि मानसिक कार्यमें, कल्पना करने, स्वप्न देखने आदिमें लगे रहनेमें होती है। अथवा, इसका कारण फिर आत्म-संयम और अनुशासनका अभाव हो सकता है।

परन्तु परिणाम सब समय एक ही होता है, अर्थात् अस्तव्यस्तता। कुछ बच्चे जब कपडा उतारते हैं, तब वे अपने कपडोंको दायें-बायें चाहे जहां फेंक देते हैं, अथवा, जब वे अपना पढना-लिखना खतम कर चुकते हैं तब वे यह नहीं जानते कि वे अपनी पुस्तकें, कापियां, पेंसिल या दावात आदि कहां रख रहे हैं; पीछे उन सब चीजोंको खोजने और इकट्ठा करनेके लिये काफी तकलीफ उठानी पडती है। सच पूछो तो ये सब चीजें एक असंयत प्रकृतिकी द्योतक हैं, ऐसे स्वभावको सूचित करती हैं जो सुश्रृंखल नहीं है; इससे पता चलता है कि वह बच्चा केवल बाहरमें ही नहीं बल्कि भीतरमें भी अव्यवस्थित है। कुछ ऐसे लोग होते हैं जो संभवतः अपनेको बडा समझते हैं और भौतिक वस्तुओंके प्रति घृणाका भी भाव रखते हैं। परन्तु श्री अरविंदका कहना है कि जो लोग चीजोंकी देख-भाल नहीं कर सकते वे उन्हें पानेके योग्य नहीं, उन्हें उन चीजोंको मांगनेका कोई अधिकार नहीं। जैसा कि मैं कहती हूं, यह एक प्रकारकी तीव्र अहंमन्यताको, बहुत अस्तव्यस्तताको सूचित करती है।

कुछ लोग ऐसे होते है जो बाह्यतः खूब स्वच्छ और सुसज्जित कमरेमें निवास करते हैं। परन्तु एक अलमारी-को खोलो, एक दराजको खींचो, तुम देखोगे कि वह एक युद्धक्षेत्र है; सभी चीजें वहां एक साथ खिचडी हो रही हैं। उनका मस्तिष्क भी बहुत कुछ वैसा ही होता है— एक हीन छोटासा मस्तिष्क जहां नाना प्रकारके विचार और भावनाएं ठीक उसी अवस्थामें रहती हैं जिस अवस्थामें

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कि बाहरी चीजें उनकी अलमारीमें होती हैं। उन्होंने उन्हें सुव्यवस्थित नहीं किया होता, उन्हें क्रमसे सजा कर नहीं रखा होता। तुम इसे एक अकाट्य नियमके रूपमें ग्रहण कर सकते हो। मैंने कभी ऐसा आदमी नहीं देखा है जो अपनी चीजोंको बेढंगे रूपमें रखता हो और फिर भी उसका मानसिक युक्ति-तर्ककी क्षमता रखता हो। उसके अंदर सब तरहके विचार बाहरी चीजोंकी तरह ही एक साथ अंड-बंड छितरे होते हैं; अत्यन्त विभिन्न और विरोधी विचार एक साथ उलझे हुए होते हैं; वे एक उच्चतर समन्वयके अंदर सुव्यवस्थित और सुसामंजस्य पूर्ण नहीं होते।

अतएव किसी मनुष्यका स्वभाव समझनेके लिये तुम्हें उसके साथ बातचीत करनेमें अपना समय व्यतीत करनेकी कोई आवश्यकता नहीं; तुम बस जाकर उसकी एक दराज खोलो या उसकी एक अलमारी खोलो और तुम उसका स्वभाव जान जाओगे। परन्तु मैं किसी एक ऐसे व्यक्तिकी चर्चा कर सकती हूं- मैं शीघ्र ही तुम्हें बताऊँगी कि वह कौन थे- जो पुस्तकों और कागजोंके स्तूपोंके बीच रहा करते थे। तुम उनके कमरेमें जाओ और तुम सर्वत्र उनके ढेर देखोगे। परन्तु, दुर्भाग्यवशतः तुमने यदि अकस्मात् एक भी कागजका टुकडा दूसरी जगह हटा दिया तो वह ठीक-ठीक पकड लेंगे और तुरत पूछेंगे कि किसने कागजोंका गडबड किया था। चीजोंके अंबार लगे रहते थे, भीतर घुसने पर तुम्हें कहीं रास्ता नहीं मिल सकता था। परन्तु प्रत्येक चीजका अपना स्थान होता था- नोट, पत्र, पुस्तकें, सब क्रममें होती थीं- और ऐसा संभव नहीं था कि तुम उन्हें इधर-उधर कर दो और वह इसे न जानें। हां, वह थे श्री अरविंद! दूसरे शब्दोंमें, तुम्हें सुव्यवस्थाको दरिद्रता नहीं समझ लेना चाहिये। स्वभावतः ही यदि तुम्हारे पास बहुत थोडी चीजें हों- एक दर्जन पुस्तकें और एक सीमित संख्यामें अन्य चीजें हों- तो उन्हें उचित ढंगसे सजा कर रखना बहुत आसान है। परन्तु हमारा लक्ष्य होना चाहिये नानाविधि वस्तुओंके बीच एक युक्ति संगत क्रम, एक सचेतन कौशलपूर्ण व्यवस्था स्थापित करना। उसके लिये सुसंगठन करनेकी एक क्षमताकी आवश्यकता होती है।

यह एक ऐसी क्षमता है जिसे प्रत्येक व्यक्तिको प्राप्त करनी चाहिये और रखनी चाहिये, अवश्य ही यदि कोई शरीरसे ही असमर्थ न हो- जब कोई अस्वस्थ, दुर्बल या अपंग हो और इसमें आवश्यक शक्ति ही न हो, और उस अवस्थामें भी एक सीमा है। मैं ऐसे अस्वस्थ लोगोंको जानती हूं जो तुमसे कह सकते थे, "वह दराज खोलो तो, तुम्हें दायें या बायें या नीचे एक ऐसी चीज दिखायी देगी।" वे स्वयं तो, चल फिर या चीजोंको रख नहीं सकते थे पर यह जानते थे कि वे कहां हैं ऐसे उदाहरणोंको छोड भी दें तो भी हमारा आदर्श व्यवस्था, सुसंगठन ही होना चाहिये; उदाहरणके लिये एक लायब्रेरीकी व्यवस्था जैसी चीज होनी चाहिये जहां हजारों-लाखों पुस्तकें होती हैं और उन पर विवरण-पत्र भी लगे होते हैं और तुम्हें बस पुस्तकका नाम बतलाना होता है और कुछ मिनटोंमें वह पुस्तक तुम्हारे हाथोंमें आ जाती है। निश्चय ही यह काम केवल एक व्यक्तिका नहीं होता, फिर भी वह नमूना तो है ही जिसका एक उदाहरणके रूपमें अनुसरण किया जा सकता है।

तुम्हें भी अपनी सारी चीजोंको उसी तरीकेसे सुव्यवस्थित रखना चाहिये। तुम्हें किसी दूसरेकी पद्धति या प्रणालीका अनुसरण करनेकी आवश्यकता नहीं। तुम्हारा एक अपना निजी नियम है जो तुम्हारे लिये सुविधाजनक और सत्य है- पर अच्छी तरह सोच समझ कर समुचित रूपसे उसकी व्यवस्था करनी चाहिये।

संस्कृत-पाठ-माला

[२४ भाग]

(संस्कृत भाषाका अध्ययन करनेका सुगम उपाय)

प्रतिदिन एक घण्टा अध्ययन करनेसे एक वर्षमें आप स्वयं रामायण-महाभारत समझ सकते हैं।

२४ भागोंका मूल्य	१२)	१।)
प्रत्येक भागका मूल्य	॥)	≈)

संस्कृत पुस्तकें

१ कुमुदिनीचंद्र	४)	॥≈)
२ सूक्ति-सुधा	।≈)	≈)
३ सुबोध-संस्कृत-ज्ञानम्	१।)	।)
४ सुबोध संस्कृत व्याकरण		
भाग १ और २, प्रत्येक भाग	॥)	≈)
५ साहित्य सुधा (पं. मेधाव्रतजी) भा. १	१।)	।)

मंत्री— स्वाध्याय मंडल, पोस्ट- 'स्वाध्याय मण्डल (पारडी)' पारडी, [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दिव्य प्रेम

श्री माताजी

★

“ भागवत प्रेमकी तीव्रता सत्ताके किसी भागमें कोई हलचल नहीं पैदा करती ” (योगके मौलिक तत्व)। क्यों पैदा करेगी ? यदि वहां कोई हलचल है तो यह अधिक संभव है कि वहां कोई दूसरे ही प्रकारका प्रेम होगा। अगर वहां भागवत प्रेम हो तो वहां कोई हलचल नहीं हो सकती। क्योंकि उसे अपनी क्षमताके अनुसार ग्रहण करता है।

भागवत प्रेम अपनी पूर्ण तीव्रताके साथ; एक महान् शक्तिके रूपमें विद्यमान है। परन्तु अधिकांश लोग, सौमें निन्यानवे मनुष्य एकदम कुछ भी अनुभव नहीं करते। वे जो कुछ हैं, जो कुछ वे ग्रहण और धारण कर सकते हैं, ठीक उसीके अनुपातमें वे अनुभव करते हैं। सच पूछो तो तुम भागवत प्रेमसे स्पन्दित एक वातावरणमें सर्वदा डूबे रहते हो। कभी कभी विरले अवसरों पर, शायद कुछ सैकंडोंके लिये तुम्हें सहसा किसी चीजका ठीक भान होता है और तुम कहते हो, ‘ हां, भागवत प्रेम मेरे पास आया ! ’ परन्तु यह कहनेका एक तरीका है। सच्ची बात तो यह है कि किसी न किसी कारणसे तुम थोडासा खुल गये और तुम्हें उस चीजका बोध हो गया जो हमेशा ही तुम्हारे साथ रहती है। दिव्य प्रेम विद्यमान है और उसी तरह दिव्य चेतना भी विद्यमान है। आखिर वे दोनों एक ही चीज हैं। वे सब समय ही विद्यमान हैं, केवल तुम उन्हें अनुभव नहीं करते या केवल आकस्मिक रूपमें करते हो। एक बार किसी तरह तुम अपने आपको, मानों बिना किसी कारणके, उस सुखद स्थितिमें पाते हो और तुम घोषणा करते हो कि आखिरकार भागवत प्रेम मेरी ओर मुडा है। परन्तु, जैसा कि मैं कहती हूं, बात उस तरहकी नहीं है। तुम्हारे अंदर कोई उद्घाटन हो गया, संभवतः सुईकी नोकसे अधिक नहीं, और वह उस चीजके भीतर घुस जानेके लिये काफी था; क्योंकि वातावरण उससे सराबोर है और जहां कहीं उसके ग्रहण किये जानेकी संभावन है वहीं वह ग्रहण की जाती है। यही बात सब दिव्य वस्तुओं पर लागू होती है। वे विद्यमान हैं, तुम उन्हें न तो ग्रहण करते हो न देखते हो, क्योंकि तुम घिरे हुए हो, बंद हो, रुंधे हुए हो। तुम अधिकांश समय अन्य चीजोंमें संलग्न रहते हो। तुम अपने आपसे भरे रहते हो, उससे ठसाठस भरपूर रहते हो और वहां दूसरी किसी चीजके लिये स्थान नहीं होता। केवल निष्क्रिय रूपमें ही नहीं बल्कि सक्रिय रूपमें अपने आपसे भरपूर रहते हो, तुम स्वयं अपने साथ प्रचंड रूपमें व्यस्त रहते हो। ऐसी अवस्थामें भला तुम अपने आस-पास अपने चारों ओर विद्यमान अद्भुत वस्तुओंको कैसे देख सकते हो ? तुम अचानक एक झलक पाते हो, शायद उस समय जब कि तुम सोये होते हो; परन्तु वह चीज शीघ्र ही विलीन हो जाती है। मनुष्यका अहंकार एक भयानक वस्तु है; समूचा विश्व उसके लिये महज उसके अहंकारका ही कार्य है। तुम केन्द्र हो और सारी सृष्टि तुम्हारे चारों ओर चक्कर काट रही है। विश्वके विषयमें तुम्हारी दृष्टि ऐसी ही है। वह जैसा है वैसा तुम उसे नहीं देखते; जब तुम इसकी ओर ताकते हो तब महज अपने आपको ही देखते हो।

अतएव, आरंभमें तुम्हें अपने अहंसे बाहर निकल जानेमें समर्थ होना चाहिये। प्रथम पगके रूपमें तुम्हें एक ऐसी स्थितिमें प्रवेश करना होगा जहां तुम्हारा अस्तित्व तक न होगा। केवल वहींसे, अर्थात् एक ऊँचाईसे, तुम वस्तुओंको ठीक वैसी ही देखना आरंभ करोगे जैसे कि वे हैं। यदि तुम वस्तुओंको वैसी ही देखना चाहो जैसी कि वे वास्तवमें हैं तो तुम्हें पूर्ण रूपसे एक दर्पणकी तरह बन जाना होगा-- निश्चल-नीरव, शांतिपूर्ण, अचल, अटल, तटस्थ, रुचि-अरुचिसे शून्य; पूर्ण ग्रहणशीलताकी अवस्थामें स्थित। तब तुम ऐसी बहुतेरी चीजें देखना आरम्भ कर दोगे जो पहले

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वहां दिखायी नहीं देती थीं पर केवल जब सक्रिय होती हुई प्रतीत होती हैं। फिर इस अनंत विश्वके अंदर एक अत्यंत नन्हेंसे बिंदुमें, जिसे तुम अपना स्वरूप कहते हो, बंद रहनेके बदले इन चीजोंमेंसे किसी एकके अंदर खूब अच्छी तरह घुस जाओगे। ऐसे कई तरीके हैं जिनसे तुम अपने 'अहं' से बाहर निकल सकते हो। जैसे भी हो, बस यही एकमात्र करने योग्य बात है, यदि तुम संसारको जैसा कि वह है वैसा देखना चाहो, उस रूपमें न देखना चाहो जिसमें कि वह तुम्हारे ही 'अहं' का एक कार्य प्रतीत होता है।

अब अहंकारसे बाहर निकलनेके लिये तुम्हें स्वभावतः ही सबसे पहले वैसे करनेकी इच्छा रखनी होगी। ऐसे करनेका सबसे अधिक पक्का रास्ता है अपने आपको भगवान् के प्रति निवेदित कर देना, भगवान्को अपनी ओर न खींचना बल्कि अपने आपको उनके चरणोंमें न्योछावर कर देना। इसी तरह तुम अपने आपको भूलना आरंभ करते हो। साधारणतया जब मनुष्य भगवान्की बात सोचते हैं, तब उनमें जो तत्काल प्रवृत्ति उठती है वह भगवान्को (अथवा जिसे वे उनका स्वरूप कहते हैं उसे) अपनी ओर या अपने अंदर खींचनेकी होती है। सामान्यतः इसका परिणाम यह होता है कि वे कुछ भी ग्रहण नहीं करते, और वे शिकायत करते हैं 'ओह! मैंने पुकारा और लगातार पुकारा, मैंने प्रार्थनाकी और निरंतरकी, पर कोई उत्तर नहीं मिला, मुझे कुछ नहीं मिला, मुझे कुछ नहीं आया।' परंतु शिकायत करनेसे पहले अपने आपसे पूछो कि क्या तुमने अपने आपको अर्पित किया था। तुम देखोगे कि अपने आपको अर्पित करनेके बदले तुमने खींचा था उदार, मुक्त-हस्त, विशाल हृदय होनेके बदले तुम एक कंजूस, भिखारी बन गये थे। जब तुम खींचते हो तब तुम संपूर्ण अपने ही अंदर बने रहते हो, अपने अहंके अंदर मोहर-बंद रहते हो। तुम अपने और उस चीजके बीच पार्थक्यकी एक दीवाल खडी कर देते हो जो तुम्हारे चारों ओर है और तुम्हारे अंदर आना चाहती है, जिसे इस तरह घुसने नहीं दिया जाता, प्रायः जानबूझकर जिसे आने देना अस्वीकार कर दिया जाता है। तुम एक कैदखानेमें अपने आपको बंद कर लेते हो और मनमें कुढते हो कि तुम्हारे पास कुछ नहीं है, तुम कुछ भी अनुभव नहीं करते। कमसे कम यदि एक भी जंगला तुमने खोला होता तो तुम्हारे चारों ओर थोडीसी रोशनी और हवा अवश्य आयी होती।

पृष्ठसंख्या ६९०] चाणक्य-सूत्राणि [मूल्य १२) डा.व्य. १)

आर्य चाणक्यके ५७१ सूत्रोंका हिन्दी भाषामें सरल अर्थ और विस्तृत तथा सुबोध विवरण। भाषान्तरकार तथा व्याख्याकार स्व. श्री रामावतारजी विद्याभास्कर, रतनगढ (जि. बिजनौर)। भारतीय आर्य राजनैतिक साहित्यमें यह ग्रन्थ प्रथम स्थानमें वर्णन करने योग्य है यह सब जानते हैं। व्याख्याकार भी हिन्दी जगत्में सुप्रसिद्ध हैं। भारत राष्ट्र अब स्वतन्त्र है। इस भारतकी स्वतन्त्रता स्थायी रहे और भारत राष्ट्रका बल बढे और भारत राष्ट्र अग्रगण्य राष्ट्रोंमें सम्मानका स्थान प्राप्त करे, इसकी सिद्धता करनेके लिये इस भारतीय राजनैतिक ग्रन्थका पठन पाठन भारतभरमें और घरघरमें सर्वत्र होना अत्यंत आवश्यक है। इसलिये इसको आज ही मंगवाइये।

श्री मन्त्री— स्वाध्याय मण्डल,
पोस्ट- 'स्वाध्याय मण्डल (पारडी)', पारडी [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भगवान् के साथ पूर्ण एकत्व

(श्री माताजी)

★

यह कैसे अनुभव किया जाये कि हम भगवानके हैं और भगवान हमारे अन्दर कार्य कर रहे हैं ?

मस्तिष्कके द्वारा नहीं, यद्यपि मनुष्य बराबर ही उससे आरम्भ कर सकता है; क्योंकि ज्योति सबसे पहले मस्तिष्कका ही स्पर्श करती है। तुम्हें अपनी बोध–शक्तिके द्वारा अनुभव करना होगा, अर्थात्, उस ज्वलंत अभीप्साके अंदर उसे भांप लेना होगा, जो अपने आपको चरितार्थ करनेकी चेष्टा कर रहा है। कभी-कभी किसी पहलवानको ऐसा हो सकता है। मान लो, तुम एक भारी वजन उठानेकी चेष्टा कर रहे हो और उस पर बहुत गंभीर रूपसें एकाग्र हो गये हो। अचानक, विना जाने कि यह कैसे हुआ, तुम अनुभव करते हो कि कोई दूसरी शक्ति उसे ऊपर उठा रही है, किसी चीजने तुम्हारे हाथोंको अधिकृत कर लिया है और वही इस असंभव कार्यको उनके द्वारा करवा रही है।

उस समय शरीरके अस्तित्वका कोई भान नहीं होता। बहुतसे लेखकोंको भी ऐसा ही अनुभव होता है। उनके अंदर कोई ऐसी चीज जो उनका अपना स्वरूप नहीं होती, विचार करती है, बहुत अधिक स्पष्ट रूपसें देखती है, उनसे अनंततः अधिक सचेतन होती है और विचारों तथा शब्दोंको सजाती है। स्वयं लेखक नहीं लिखता बल्कि यह दूसरी चीज ही लिखती है। ऐसे समयों पर मनुष्यका तुच्छ व्यक्तित्व जो संघर्ष करता और प्रयास करता है, वहां बिल्कुल नहीं होता। अवश्य ही इस अनुभवके पूर्ण होनेके लिये और इसमें कोई बाधा न आने देनेके लिये भौतिक अस्तित्वको जहां तक संभव हो वहां तक शान्त–स्थिर बनाये रखना चाहिये।

ऐसी अनुभूति प्राप्त करनेके लिये तुम्हारे अन्दर सबसे पहले उसके लिये संकल्प होना चाहिये; तुम्हें उसकी इच्छा और अभीप्सा करनी चाहिये, अधिकाधिक कम अहंकारपूर्ण बननेकी चेष्टा करनी चाहिये। फिर तुम्हारे अन्दर यह ज्योति, यह तीव्र आकांक्षा, एकत्वकी इस आवश्यकताका बोध होना चाहिये। यह एक प्रकारका प्रोज्ज्वल उत्साह है जो तुम्हें अधिकृत कर लेता है, भगवान्में घुल–मिल जाने और उनसे अलग न रहनेकी एक अदम्य प्रयोजनीयता है। सच है, यह ऐसी अवस्था है जो बहुत देर तक नहीं बनी रहती– आरम्भमें– उसके तुरन्त ही तुम्हें उसका उलटा अनुभव मिलता है। परन्तु तुम यदि प्रयास जारी रखो, अपने संकल्प और अपनी अभीप्साको बनाये रखो तो दूसरी अवस्था फिर आ जायेगी।

कुछ समय तक, जब तक कि पूर्ण विलयन साधित नहीं हो जाता, दोनों स्थितियां बारी–बारीसे आती रहती हैं। अन्तमें तुम्हारी व्यक्तिगत सत्ता और भागवत सत्तामें जब

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कोई विभेद नहीं रह जाता, दोनों मिल कर एक हो जाती हैं। उस समय जब किसी वस्तुकी उत्कण्ठाकी स्थिति, आत्मदान करनेका आनन्दपूर्ण बोध नहीं होता जिसमें कि दोनों फिर भी अलग अलग होती हैं। मिल-जुल जाने और एकाकार हो जानेकी, पूर्ण तादात्म्यकी स्थिति अत्यन्त ही सरल और बिल्कुल ही स्वाभाविक हो जाती है। मैंने एक बार पेरिसमें एक भारतीय सूफीसे चेतनाकी इस स्थितिकी बात सुनी थी। उन लोगोंको भी इसकी बात मालूम थी।

तब क्या वह अन्तिम अवस्था है, उसके बाद फिर प्रगति नहीं होती ?

प्रगतिका कोई अन्त नहीं है। क्योंकि, यह पूर्ण एकत्व शरीरका पूर्ण रूपान्तर होनेसे पहले ही घटित हो सकता है। एकत्व चेतनाकी एक चीज है। भौतिक चेतना और भौतिक जडत्वके बीच भी बहुत अधिक अन्तर है। अत्यन्त उन्नत योगी भौतिक चेतनामें उस सिद्धि तक पहुंच सकता है, परन्तु इससे भौतिक जडतत्व भी उसमें समाविष्ट नहीं हो जाता। स्थूल शरीरका रूपान्तर भूतकालमें नहीं किया गया है और न शायद उसके लिये प्रयास ही किया गया है। यह केवल तभी किया जा सकता है, जब कि जीवनको काफी लम्बे समय तक बनाये रखा जाय; तुम तब तक शरीर नहीं छोडते जब कि तुम उसके लिये इच्छा नहीं करते और इस तरह उस परिवर्तनको लानेके लिये आवश्यक समय तुम्हारे हाथमें रहता है।

श्री अरविंदने एक बार कहा था- और उन्होंने बिना हिचकिचाये ऐसा कहा था- कि इसे करनेमें लगभग तीन सौ वर्ष लग जायेंगे और मैं इसमें इतना और जोड सकती हूं कि भगवान्‌के साथ प्राप्त एकत्वकी जिस अन्तिम स्थितिका मैंने वर्णन किया है उसकी सिद्धिके बाद उतने दिन लगेंगे।

मैं कह दूं कि यह तीन सौ वर्षका समय तो कमसे कम है। अब तुम्हें अनुभव करना चाहिये कि शरीरको रूपान्तरित करनेका अर्थ क्या है। शरीर अपने सभी अवयवों और क्रियाओंके साथ तुम्हारी चेतनाके हस्तक्षेपके बिना ही अपने आप कार्य करता है और यह एक यथोचित योजनाके अनुसार बना हुआ है। यदि तुम्हारा हृदय सैकिंडके एक सौवे भागके लिये भी बंद हो जाता है तो तुम्हारा शरीर मृत हो जाता है। तुम अपने किसी एक अंगके बिना काम नहीं चला सकते और तुम्हें उनकी यथार्थ क्रियाके ऊपर निगरानी रखनी ही होगी।

रूपान्तरका अर्थ है इस विशुद्ध स्थूल क्रियाको हटा कर उसकी जगह एक विशेष पद्धतिसे शक्तियोंको केंद्रीभूत करना। तुम्हें एक विशेष प्रकारके प्रकंपनोंके अनुसार शक्तियोंको सुव्यवस्थित करना होगा जो एक उच्चतर शक्तिके केंद्रीभूत होनेकी क्षमताके द्वारा कार्य संचालन करती है। फिर तो न कोई हृदय रह जायेगा न उदर। ये चीजें प्रकंपनकी एक व्यवस्थाको स्थान देंगी जो उस वस्तुका प्रतिनिधित्व करती है जो ये वास्तवमें हैं। स्थूल अवयव शक्ति-केन्द्रोंके सूचक हैं; वे मूल वस्तु नहीं हैं, वे विशेष परिस्थितियोंके अधीन उसे एक सांचा या आकृति प्रदान करते हैं। रूपान्तरित शरीर अपने सच्चे शक्ति-केन्द्रोंके द्वारा कार्य करेगा, पशु-शरीरमें विकसित उनके प्रतिनिधियोंके द्वारा नहीं। उसके लिये तुम्हें सबसे पहले इन केन्द्रों और इनकी क्रियाओंके विषयमें सचेतन होना होगा; एक अचेतन यंत्रवत् क्रियाके स्थानमें एक सचेतन नियंत्रणकी क्रिया होनी ही चाहिये।

इस तरह हमारे हाथोंमें भौतिक पशु सुलभ अंग ही नहीं रहेंगे बल्कि सांकेतिक प्रकंपन, सांकेतिक शक्तियां होंगी। इसका मतलब यह नहीं है कि ऐसा कोई सुनिश्चित आकार रहेगा ही नहीं जिसे पहचाना जा सके। तब आकार ठोस (धूलिके) कणोंके बदले गुणोंके द्वारा निर्मित होगा। वह, हम कह सकते हैं कि, एक व्यावाहारिक या कार्योपयोगी आकार होगा; वह कठोर और ठोस स्थूल आकारसे भिन्न, कोमल और तरल होगा।

जिस तरह तुम्हारे हृद्गत् भाव, आवेगके साथ-साथ तुम्हारे चेहरेका भाव बदल जाता है, ठीक उसी तरह आंतरिक क्रियाकी आवश्यकताके अनुसार शरीर भी परिवर्तित होगा। क्या तुम्हें अपने स्वप्नमें इस तरहका अनुभव कभी नहीं हुआ है? तुम हवामें ऊपर उठ जाते हो और तुम अपनी कुहनीसे एक जोर धक्का देते हो और तुम्हारा शरीर उसी ओर फैल जाता है; तुम अपने पैरसे एक ठोकर मारते हो और तुम कहीं दूसरी जगह जा पहुंचते हो; तुम इच्छा करते ही पारदर्शक बन सकते हो और बडी आसानीसे एक ठोस दीवालके उस पार चले जा सकते हो! रूपान्तरित

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शरीर बहुत कुछ इसी प्रकार आचरण करेगा; वह हलका, उज्ज्वल, रबड जैसा लचकीला होगा। हलकापन, उज्ज्वलता और लचकीलापन ही उस शरीरके एकदम मौलिक गुण होंगे।

ऐसा शरीर तैयार करनेके लिये ३०० वर्ष कुछ नहीं हैं; यहां तक कि हजार वर्ष भी बहुत अधिक नहीं होगा। निश्चय ही मैं इसी शरीरकी बात कह रही हूं। यदि तुम बीचमें ही अपने शरीरको परिवर्त्तित कर लो तो वह ठीक वह शरीर नहीं होगा। ५० वर्षकी उमरमें शरीर क्षीण होना आरम्भ कर देता है। परन्तु, इसके विपरीत, यदि तुम्हारे पास ऐसा शरीर हो जो पूर्णताकी ओर अग्रसर होता जा रहा हो, अगर प्रत्येक बीतने वाला वर्ष उसके लिये प्रगतिका एक पग सूचित करनेवाला हो तो तुम अनन्त काल तक जीवित रह सकते हो क्योंकि, आखिरकार तुम अमर हो।

एक दूसरी कठिनाई है जिसका सामना हमें रूपान्तरके कार्यमें करना पडता है। किसी विशेष शरीरको तब तक परिवर्त्तित नहीं किया जा सकता जब तक कि उससे मिलता-जुलता थोडासा परिवर्तन आस-पास रहनेवाले शरीरों तथा सामान्य रूपसे चारों ओरके वातावरणमें भी नहीं लाया जाता, क्योंकि मनुष्य अन्य लोगोंके बीच पारस्परिक आदान-प्रदानके बीच जीता और चलता-फिरता है। और सामूहिक परिवर्तन व्यक्तिगत परिवर्तनकी अपेक्षा अधिक समय लेता है। अतएव यह सच पूछा जाय तो यह कार्य व्यक्तिगत चेतनाको नहीं वरन् समष्टिगत चेतनाको करना है।

संसार प्रगति कर रहा है। और संसारमें रहनेके कारण तुम्हें भी प्रगति करनी ही होगी। परन्तु यह प्रगति ऐसी है जिसे भगवान् तुम्हारे अन्दर तुम्हारे जाने बिना ही या तुम्हारे सहयोगके बिना ही साधित करते हैं। अतएव यह प्रगति बहुत धीमी होती है, प्रकृति जो समय अपने कार्यमें बिताती है उसका वह हिसाब नहीं लगाया करती, उसके सामने तो शाश्वत काल पडा हुआ है और उसे कोई जल्दी नहीं है। उसकी अग्रगतिके अन्दर शताब्दियां और सहस्राब्दियां महज एक क्षणके समान हैं। जिस लक्ष्यको उसने अपने सामने रखा है वहां वह एक दिन अवश्य पहुंचेगी यहां तक कि शरीरके पूर्ण रूपान्तरको तथा अतिमानवके आविर्भावको भी वह साधित करेगी।

परन्तु यदि मनुष्य ज्ञान-पूर्वक सहयोग दे तो यह काम शीघ्र पूरा हो सकता है। अधिकांश लोग, निश्चय ही मनुष्योंकी बहुत बडी संख्या अपने अंदर होनेवाले भगवान्के कार्यके विषयमें सचेतन नहीं होती। सचेतन होनेका अभिप्राय है जो कुछ हो रहा है उसके प्रति सजग होना, ग्रहणशील होना तथा उसके प्रभावके प्रति निष्क्रिय बने रहना। जितना ही अधिक तुम अपने आपको दे दोगे और जितना ही अधिक तुम सच्चे होंगे, उतनी ही अधिक शीघ्रता और सुनिश्चितताके साथ तुम्हारी सिद्धि भी आयेगी। जिस कार्यको करनेमें अन्यथा वर्षों लग जाते उसे ही तुम कुछ थोडेसे क्षणोंमें कर सकते हो। यही योगका उद्देश्य है।

उपनिषद् ग्रंथमाला

१	ईश उपनिषद्	२)	.३७
२	केन उपनिषद्	१.७५	.३१
३	कठ उपनिषद्	१.५०	.२५
४	प्रश्न उपनिषद्	१.५०	.२५
५	मुण्डक उपनिषद्	१.५०	.२५
६	माण्डूक्य उपनिषद्	.५०	.१२
७	ऐतरेय उपनिषद्	.७५	.१९
८	तैत्तिरीय उपनिषद्	१.५०	.२५
९	श्वेताश्वतर उपनिषद् (छप रहा है)		

सुबोध संस्कृत व्याकरण

(प्रथम और द्वितीय भाग)

प्रत्येक भागका मू. ५० न. पै. डा. व्य. १२ न. पै.

इस 'सुबोध संस्कृत व्याकरण' द्वारा हम मॅट्रिकके छात्रके लिये आवश्यक व्याकरण ज्ञानको पूर्ण बनाना चाहते हैं। हमारी भाषा परीक्षाओंमें सम्मिलित होनेवाले परीक्षार्थी भी इसकी सहायतासे सहज ही मॅट्रिक अथवा तत्सम परीक्षाओंको उत्तीर्ण कर सकेंगे, ऐसा विश्वास है।

मंत्री— स्वाध्याय-मण्डल, पो. स्वाध्याय-मण्डल, (पारडी)' [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ध्यान ही ध्यान

श्री माताजी

☆

कुछ लोग जब ध्यान करने बैठते हैं तब वे समझते हैं कि वे किसी अद्भुत स्थितिमें चले जाते हैं और उन्हें इस बातका बडा गर्व होता है। परन्तु अधिकांश समय वे ध्यान में क्या करते हैं ? महज अपने विचारोंको ढीला छोड देते हैं; यह एक प्रकारका बहुरूपदर्शक यंत्र (Kaleidoscope) होता है जो उनके मस्तिष्कमें चलता रहता है। परन्तु कुछ ऐसे लोग होते हैं जो कुछ क्षण बिना किसी विचारके रह सकते हैं, परन्तु उन्हें यदि एकाएक उस समय किसी कारणवश पुकारा जाय तो वे आग बबूला होकर जगते हैं और कहते हैं कि एक अच्छा सा ध्यान नष्ट होगया तथा उसके लिये वे सारे जगत्के विरुद्ध बडबडाते और नाराज होते हैं। इसी तरह कुछ थोडेसे लोग ऐसे होते हैं जो जानते हैं कि ध्यान कैसे किया जाता है, वे भगवान्के साथ एक प्रकारका एकत्व प्राप्त कर लेते हैं। निश्चय ही यह बहुत अच्छा है।

कुछ दूसरे लोगे ऐसे होते हैं जो एक विचारधाराका एक हद तक अनुसरण करते हैं; यहां तक कि उस विचार के केन्द्र बिन्दु तक पहुंच जाते हैं। यह भी बहुत अच्छी बात है। पर अधिकांश लोग अर्ध–निद्राकी अवस्थामें चले जाते हैं, अर्थात्, बहुत तामसिक स्थितिको प्राप्त हो जाते हैं। मन उनका जड हो जाता है, अभीप्सा निश्चेष्ट हो जाती है, सारी सत्ता ही जड बन जाती है। वे उस अवस्थामें लगातार कई घंटों तक पडे रह सकते हैं। हां, जडताकी अपेक्षा अधिक स्थायी दूसरी कोई चीज नहीं है। और जब वे उससे बाहर निकलते हैं तब यह समझते हैं कि हमने कोई बडी महान् वस्तु प्राप्त कर ली है। परन्तु वे महज अचेतनामें ही जा पडे थे।

हां, कुछ लोग जानते हैं कि ध्यान कैसे किया जाता है। परन्तु हम यदि यह मान भी लें कि तुम यह जानते हो कि दिव्य चेतनामें कैसे प्रवेश किया जाता है तो भी उस अनुभवका तुम्हारे बाहरी जीवन पर भी कुछ प्रभाव अवश्य पडना चाहिये— स्वभावतः ही यह बात संबंधित व्यक्तियोंके अनुसार अलग-अलग होगी। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो स्पष्टतः ही अपने आपको दो भागोंमें काट डालते हैं। ये लोग, जैसा कि मैं कह चुकी हूं, जब ध्यानावस्थामें प्रवेश करते हैं तब इन्हें अनुभूतियां और बहुत सुन्दर अनुभूतियां होती हैं या ये समझते हैं कि इसें अनुभूतियां हुई हैं।

परन्तु जब वे वापस आते हैं और कार्य करना आरम्भ करते हैं तब वे अत्यन्त सामान्य मनुष्य बन जाते हैं, उनमें उत्पन्न साधारण प्रतिक्रियाएं होती हैं, जो काम नहीं करने चाहियें वैसे सब प्रकारके कार्य करते हैं। वे केवल अपनी ही चिंता करते हैं, अपने ही जीवनको व्यवस्थित करनेमें संलग्न रहते हैं, दूसरोंके लिये कोई बात उनके मनमें नहीं उठती, वे सोचते ही नहीं कि कोई आदमी संसारके लिये भी उपयोगी हो सकता है या नहीं। और फिर भी ध्यानके समय किसी उच्चतर और गभीरतर चेतना तथा सद्वस्तुके साथ उनका संबंध स्थापित होता है। यही कारण है कि जिन लोगोंने देखा कि मानव प्रकृतिको बदलना कठिन है उन्होंने इसे असंभव घोषित कर दिया और यह सलाह दी कि ऐसी अवस्थामें एकमात्र कर्तव्य है संसारका त्याग कर उससे दूर भाग जाना।

स्वभावतः ही यदि सब लोग भाग जाते तो फिर कोई जगत् ही न रह जाता। पर सौभाग्य या दुर्भाग्य वश, जगत्का अस्तित्व व्यक्तियोंकी इच्छा पर निर्भर नहीं करता, जगत्की सृष्टिमें उनका ही हाथ नहीं था और वे यह जानते ही नहीं कि यह कैसे उत्पन्न हुआ। क्या महज इसी कारण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जगत्का अस्तित्व लोप पा जायेगा कि कुछ लोग संसारसे दूर भाग जाते हैं– उनके लिये, संभवतः, पर दूसरोंके लिये? यद्यपि मैं निश्चित रूपसे नहीं कह सकती कि वे लोग भी भागनेमें सफल होते ही हैं।

पर जो हो, मैं नहीं विश्वास करती कि तुम ध्यानके द्वारा अपना रूपान्तर कर सकते हो। परन्तु जब कोई काम तुम्हारे सामने हो और तुम उसे यथासंभव अच्छेसे अच्छे ढंगसे करो, फिर उसे करते हुए इस बातका ख्याल रखो कि तुम भगवान्को भूल न जाओ तथा तुम अपने आपको उनके प्रति समर्पित कर दो जिससे कि वह तुम्हारी सत्ताको परिवर्त्तित कर दें, तुम्हारी प्रतिक्रियाओंको किसी सुंदर और ज्योतिर्मय चीजमें परिणत कर दें, तो निश्चय ही भगवान् तुम्हें रूपान्तरित कर देंगे।

जो लोग सब कुछ छोड़ कर कम या अधिक सूने ध्यान की अवस्थामें बैठ जाते हैं, ऐसे लोगोंको मैंने कभी कोई उन्नति करते हुए नहीं देखा है; हर हालतमें उनकी उन्नति बहुत सामान्य होती है। इसके विपरीत, मैंने ऐसे लोगों को देखा है जो संसारमें परिवर्तन लानेके उद्देश्यसे कार्य करनेके लिये उत्साहसे भरे होते हैं, जो पूर्ण रूपसे, बिना कुछ बचाए, अपने आपको उस कार्यमें लगा देते हैं; वे व्यक्तिगत मुक्तिकी कोई भावना मनमें न रख अपने आपको समर्पित कर देते हैं। हां, ऐसे ही लोगोंको मैंने अत्यन्त अद्भुत उन्नति करते हुए देखा हैं। दूसरी ओर मैंने बहुतसे लोगोंको मठोंमें रहते हुए देखा है; परन्तु वे इस योग्य नहीं कि उनकी चर्चाकी जाय। सच पूछो तो तुम संसारसे दूर भाग कर इसको नहीं बदल सकते; केवल इस पर निरन्तर दृढताके साथ कार्य करके ही तुम इसमें परिवर्त्तन ला सकते हो।

क्या इसका मतलब यह है कि ध्यानका बिल्कुल कोई उपयोग ही नहीं?

तुम्हारे लिये जितना आवश्यक है उतना ध्यान स्वयं तुम्हारे पास आयेगा। जब वह आता है तब वह तुम्हें अभिभूत कर देता है; उस समय उससे तुम्हें बाधा नहीं डालनी चाहिये। उस समय तुम बैठ जाते हो और अपने भीतर बैठ जाते हो, अपने आपको भीतरकी ओर खींच लेते हो और आवश्यक आंतरिक प्रगति कर लेते हो। जब वह पूरा कर लेते हो तब तुम बाहर आते हो और फिरसे अपना काम आरम्भ करते हो। परन्तु सबसे बडी बात है कि तुम फूल मत उठो।

जो लोग यह समझते हैं कि हम असाधारण जीव हैं और हममें अधिक योग्यता हैं, वे अपनी उन्नतिमें बाधा उपस्थित करते हैं। विनम्रताकी बडी आवश्यकता है, इस पर मुझे जोर देना ही होगा। प्रायः ही लोग इसके विषयमें बहुत कुछ कहते आ रहे हैं, पर वे इसे अच्छी तरह समझते नहीं। विनम्र होओ, पर होओ यथार्थ रूपमें। यदि तुम मिथ्याभिमान-रूपी इस व्यर्थकी घासको सहज उखाड फेंकते! कितना कठिन, हां कितना दुष्कर है यह! तुम किसी न किसी जगह गुप्त रूपसे उत्फुल्ल हुए बिना, छिपी हुई आत्मसन्तुष्टिका पोषण किये बिना कोई एक भी अच्छा कार्य नहीं कर सकते, जरा भी उन्नति नहीं कर सकते। अपने अहंकारके उस कठोर केन्द्रको चूर्ण-विचूर्ण करनेके लिये तुम्हें हथौडेसे प्रहार करना होगा। इसी विषैली जडीको नष्ट करनेके लिये तुम्हें सारे जीवन कार्य करना होगा। तुम समझते हो कि तुमने उसे कर लिया है और अन्तमें उसे कर चुकनेकी भावनासे इतने अधिक सन्तुष्ट हो उठते हो।

सामवेद–भाष्य

सामवेद भाष्यकार श्री स्वामी भगवदाचार्यजी महाराज।

'सामसंस्कार भाष्य' नामसे यह सामवेदका उत्तम भाष्य संस्कृतमें तथा हिंदीमें है।

प्रथम भाग मूल्य ८) रु.
द्वितीय भाग मूल्य ८) रु.

डाक व्यय पृथक् है। अति शीघ्र मंगवाइये।

मंत्री— स्वाध्याय मंडल,
पोस्ट– 'स्वाध्याय मंडल पारडी,'
पारडी (जि. सूरत)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मनका बाजार

श्री माताजी

★

तुम कल्पना नहीं कर सकते कि मस्तकके भीतर कैसा बाजार है। यह बडी ही भयावनी चीज है। यदि तुम सचमुचमें जरा अलग होकर देखो कि वहां क्या हो रहा है तो तुम स्तम्भित हो जाओगे। अतएव तुम्हें इसे एक क्रममें बैठाना होगा। स्पष्ट रूपमें यह खोज करनी होगी कि इसमें क्या है और फिर उसको सजाना होगा; तुम्हें यह ख्याल रखना होगा दो विरोधी विचार एक साथ समानान्तर रेखामें न दौड रहे हों।

मैं काफी संख्यामें ऐसे लोगोंको जानती हूं जो अपने मस्तिष्कमें विरोधी विचारोंका पोषण करते हैं, उन विचारोंमें बिलकुल ही संगति नहीं होती– यहां संगतिका कोई प्रश्न ही नहीं होता– बल्कि वहां विचार साथ-साथ दो भाईयोंकी तरह निवास करते हैं जो चिरदिन झगडों और विरोधोंमें तल्लीन रहते हैं। वहां दो विचार तब तक नहीं रह सकते जब तक कि तुम उन्हें एक उच्चतर और विशालतर दृष्टिके अंदर ऊपर उठा कर समन्वित और युक्त नहीं कर देते; पर इसका अर्थ होता है एक उच्च कोटिका कार्य। बहुधा लोग यह जानते भी नहीं कि वे अपने विरोधी विचारोंके द्वारा स्वयं अपना ही विरोध कर रहे हैं, वे किसी तरह विचलित नहीं होते। अगर मैं तुम्हें उदाहरण दूं– वे असंख्य हैं– तो तुम एक साथ मिले-जुले असंगत विचारोंकी विलक्षण अवस्थाको देख कर हंसे बिना न रहोगे।

मैं तुम्हें एक काम देना चाहती हूं। सभी विषयोंमें तुम्हारे अपने विचार हैं। संसारके विषयमें, जीवनके विषयमें, विश्व क्यों हैं, कहांसे आया है और किधर जा रहा है, कहांसे हम यहां आये हैं, हमारा वर्तमान कर्तव्य क्या है, भविष्यमें हमें क्या सिद्ध करना है, आदि-आदि विषयोंमें निश्चित ही तुम अपने विचार रखते हो। अब इन सब विचारोंको अपने सामने रखनेकी कोशिश करो और फिर उन्हें सजाओ। क्या तुम्हें यह काम आसान मालूम होगा? निस्संदेह ऐसा करनेसे तुम्हें आनन्द होगा और तुम आश्चर्यजनक चीजोंको खोज निकालोगे। सबसे पहले, स्वयं प्रदर्शनका यह काम ही, अर्थात् अपने सामने विचारोंको पास-पास रखनेका महज यह काम ही, तुम्हारी कक्षामें किसी दिये हुए विषय पर प्रबन्ध लिखनेके समान, किसी विशेष विषय पर जितने तुम्हारे विचार हैं उन सबको सामने ले आना ही, तुम्हारे सामने कितनी ही अनोखी बातोंको प्रकट कर देगा। यदि तुम पहिलेसे ही किसी केन्द्रीय विचारको, किसी केन्द्रीय शाश्वत सत्यको धारण करनेका अभ्यास न हो– अगर ऐसा करना संभव हो और उसके चारों ओर तुमने सभी पास-पास रहनेवाले विचारोंको क्रमसे रख लिया हो, एक युक्तिसंगत ढंगसे उन्हें सुसंगठित कर लिया हो, और मेरा कहना है कि, इस तरहकी कोई चीज यदि तुमने पहले ही न कर ली हो– तो एक दुःख पूर्ण स्थितिमें न सही, कमसे कम एक विकट स्थितिमें तो तुम अवश्य ही अपनेको पाओगे।

तुम कल्पना नहीं कर सकते कि एक घंटेके भीतर न जाने कितने परस्पर विरोधी विचारोंको तुम जरा भी आश्चर्य किये बिना सोच जाते हो। उदाहरणके लिये इस विषयको ले लो; "वह कौनसा लक्ष्य है जिसकी ओर जीवन अग्रसर हो रहा है?" अथवा "भला मनुष्य मरनेके लिये ही क्यों जन्म ग्रहण करते हैं?"— कोई भी जरा व्यापक विषय लो और इसके जैसा कुछ हद तक निरपेक्ष विषय भी लो, ऐसे प्रश्न न लो कि आज 'फुटबाल' ही क्यों और 'बास्केट बाल' क्यों नहीं,– ऐसी बातोंकी व्याख्या तो आसानीसे दी जा सकती है– और फिर उस विषय पर अपने सभी विचारोंको एक कतारमें रखनेकी चेष्टा करो, तो तुम देखोगे कि सारा मामला ही कितना विचित्र है!

यह कैसे पहचाना जाय कि कौनसा विचार तो स्वयं अपना है और कौनसा विचार अन्य स्थानसे (किसी पुस्तक या व्यक्तिसे) आया है?

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ऐसी कोई बात ही नहीं कि हम यह कह सकें कि यह विचार तो मेरा है और यह विचार दूसरोंका है। किसी आदमीमें ऐसा कोई विचार नहीं जो पूर्ण रूपसे उसका अपना ही हो। एक विस्तृत प्रदेश है जिसमेंसे कोई भी आदमी अपनी व्यक्तिगत रुचिके अनुसार उन्हें खींच सकता है। विचार सामाजिक संपत्ति हैं, साझेकी जायदाद हैं। पर उनके कई स्तर होते हैं। एक तो अत्यन्त सामान्य या सर्वजन सुलभ स्तर है जहां पर हम सबने अमूर्त्त धारणाओं-के एक सघन स्तूपके अंदर अपना मस्तिष्क डुबा रखा है।

यह प्रत्येक मनुष्यका ही स्तर है। दूसरा स्तर जरा इससे ऊँचा है, वह विचारकोंका, जैसा कि उन्हें नाम दिया जाता है, स्तर है। फिर उससे भी आगे दूसरे स्तर हैं, बहुतेरे स्तर हैं, कुछ तो शब्दोंके राज्यसे भी परे हैं, फिर कुछ दूसरे भावनाओंके राज्यके अंदर हैं। जो लोग काफी ऊँचाई तक चढ पाते हैं, वे ज्योति जैसी दिखायी देनेवाली किसी चीज-को पकडने और उसकी भावनाओंकी पुडिया या उसके विचा-रोंके पुलिंदेके साथ उसे नीचे उतार लानेमें समर्थ होते हैं।

जो भावना एक उच्चतर क्षेत्रसे नीचे उतारी जाती है वह अपने आपको संगठित करती है, ऐसे विभिन्न विचारोंमें अपने आपको मूर्तिमान करती है जो उस भावनाको भिन्न भिन्न ढंगसे प्रकट करनेके उपयुक्त होते हैं। फिर, यदि तुम लेखक, कवि या कलाकार हो और उसे और भी नीचे अधिक स्थूल आकारोंमें उतार लाओ तो तुम सहज एक भावनाको ही, संभवतः सहज एक छोटीसी भावनाको, पर एक महान् ऊँचाईसे आनेवाली प्रार्थनाको ही प्रकट करने-वाली नाना प्रकारकी अभिव्यंजनाएं, अनन्त विधियां प्राप्त कर सकोगे। यदि तुम ऐसा कर सको तो तुम यह भी जान जाओगे कि विशुद्ध भावना और उसे व्यक्त करनेकी पद्धतिमें क्या भेद होता है। अगर तुम स्वयं ऐसा करनेमें असमर्थ होओ तो तुम दूसरोंकी सहायता ले सकते हो, तुम दूसरे व्यक्तियों और पुस्तकोंसे सीख सकते हो।

उदाहरणार्थ, तुम इस बातको ध्यानपूर्वक देख सकते हो कि किसी विशिष्ट भावनाको विभिन्न कवियोंने किस प्रकार विभिन्न रूप प्रदान किये हैं। एक तो शुद्ध या मौलिक भावना होती है, फिर आदर्श रूप या श्रेणी सूचक भावना होती है और उसके बाद बहुतसी सुस्पष्ट रचनाएं होती हैं। तुम इस तरह अपने मनको शिक्षित कर सकते हो, उसे नमनीयता, सूक्ष्मता, शक्तिशालिता तथा अन्यान्य गुणोंको आयत्त करना सीख सकते हो।

सच पूछो तो, यदि तुम वास्तवमें बुद्धिमान होना चाहो तो तुम्हें थोडासा मानसिक व्यायाम करना सीखना होगा, ठीक उसी तरह जिस तरह तुम यदि शक्तिशाली समर्थ शरीर पाना चाहते हो तो तुम्हें शारीरिक व्यायाम करना पडता है। जिन लोगोंने कभी मानसिक व्यायाम नहीं किया है उनका बडा छोटा अविकसित मस्तिष्क होता है; अपने सारे जीवन वे बच्चोंकी तरह ही विचार करते हैं। मानसिक व्यायामका मतलब यह है कि तुम्हें यह जानना चाहिये कि इसे कैसे करना चाहिये और फिर इसे गंभीरता पूर्वक करना चाहिये। सबसे पहले इसका मतलब यह है कि तुममें कोई बद्ध धारणा नहीं होनी चाहिये, जैसे यह विचार सत्य है और वह विचार असत्य है, यह सूत्र शुद्ध है और दूसरा सूत्र अशुद्ध है अथवा यह धर्म सच्चा है और दूसरा धर्म झूठा है इत्यादि-इत्यादि।

अगर तुम इस धारामें अग्रसर होओ तो तुम बहुत शीघ्र बुद्धिहीन, वज्रमूर्ख बन जाओगे। तब तुम्हें क्या करना चाहिये? धर्मका ही विषय ले लो, तुम्हें बारी-बारीसे सभी धर्मोंको लेकर यह देखना चाहिये कि किस तरह सबने किसी न किसी प्रकारकी स्वयं भू सत्ताके प्रति होनेवाली एक ही मानवीय अभीप्साको व्यक्त किया है। तुम उनकी तुलना कर सकते हो और उनके भेदको निरूपित कर सकते हो, उन्हें समझ सकते हो, उन्हें तौल और माप सकते हो, यह खेल बहुत ही मजेदार मालूम होगा।

अब, जब कि तुम सब प्रकारके विचारोंको अधिकृत कर चुके हो, अभिव्यंजनाके सभी तरीकोंको पकड चुके हो, तुम उनके परे चले जानेकी कोशिश करते हो, तुम उनकी ओर देख सकते हो और अनंत कालसे जिस तर्क-वितर्कमें मनुष्य जाति संलग्न है उस पर हंस सकते हो। जब तुम अपने मनके अधिपति हो और मनुष्य जातिका जो अत्यन्त सामा-न्य अभ्यास प्रतीत होता है— केवल इसी कारण उत्तेजित हो जाना कि कोई आदमी तुम्हारी तरह ही विचार नहीं करता— उसके अधीन अब तुम नहीं हो।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रुपये--पैसेका मूल्य

श्री माताजी

★

जितना ही अधिक किसीको पैसा मिलता है उतना ही अधिक वह विपत्तिमें पडता है। वास्तवमें वह एक विपत्ति ही है मेरे बच्चो !

रुपये पैसेका होना एक महाविपत्ति है। पैसा तुम्हें मूढ बना देता है, वह तुम्हें लोभी, कुकर्मी बना देता है। यह संसारकी एक सबसे बडी आफत है। धन वह वस्तु है जिसे मनुष्यको तबतक नहीं रखना चाहिये जबतक कि वह कामनासे शून्य, आसक्तिसे रहित न हो जाय, जब किसीको पृथ्वीके समान विशाल चेतना प्राप्त हो जाय तभी वह पृथ्वीका सारा धन अपने पास रख सकता है और यह सबके लिये अच्छा होगा। परंतु जबतक वैसी चेतना नहीं प्राप्त होती तबतक जितना धन तुम्हारे पास है उतना ही अभिशाप भी तुम्हारे ऊपर है यह बात मैं प्रत्येक व्यक्तिके मुंह पर कहूंगी, यहां तक कि उस मनुष्यके मुंह पर भी कहूंगी जो धनी होना एक गुण समझता है। यह एक आपत्ति है, यह शायद एक प्रकारका अपमान भी है, भागवत करुणा प्राप्त करनेकी स्थितिसे पतन है, एक प्रकार के भागवत असंतोषकी अभिव्यक्ति है।

धनी होना और उसके साथ ही ज्ञानवान्, बुद्धिमान् और उदार होना बहुत कठिन है। 'उदार होना' इस बात पर जरा ध्यान दो, गरीबकी अपेक्षा धनीके लिये उदार बनना अनंतगुना अधिक कठिन है। अनेक देशोंमें अनेक लोगोंसे मेरी मुलाकात और जान-पहचान हुई है। अत्यंत उदार व्यक्ति सर्वदा ही अत्यंत गरीब थे। ज्योंही तुम्हारा पाकेट भर जाता है त्योंही मानों किसी रोगसे, धनके प्रति हीन कोटिकी आसक्तिसे तुम ग्रस्त हो जाते हो। मैं विश्वास दिलाती हूं यह एक अभिशाप ही है।

अतएव, जब किसीके पास धन हो तब उसके लिये सबसे पहला कर्तव्य यह है कि वह उसे दे डाले। परन्तु तुम्हें यह जानना चाहिये कि बिना सोचे-समझे उसे नहीं दे डालना चाहिये। तुम उस तरह धन मत दो जिस तरह की एक दानी देता हैं, क्योंकि वह तरीका उसे केवल उसकी अपनी दयालुता, उदारता और महत्ताकी भावनासे भर देता है। तुम्हें यह कार्य सात्त्विक भावके साथ करना चाहिये, कहनेका आशय, देखो कि उसका सबसे उत्तम उपयोग होनेकी संभावना कहां पर है। इस तरह प्रत्येक व्यक्तिको अपनी निजी चेतनाके अंदर, जो उच्चतम चेतना उसे प्राप्त है उसमें खोजना होगा कि जो धन उसके पास है उसका सर्वोत्तम संभाव्य उपयोग क्या है।

सब बात तो यह है कि धनका केवल उतना ही मूल्य होता है जितना कि वह व्यवहारमें रहता है। प्रत्येक व्यक्ति के लिये धनका केवल तभी मूल्य है जबकि वह खर्च किया जाता है। मनुष्यने धनके बदले एक ऐसा पदार्थ चुननेका कष्ट उठाया है जो खराब नहीं होता, जैसे सोना और चांदी, परन्तु फिर भी नैतिक दृष्टिकोणसे, जब वह कार्यमें व्यवहृत नहीं होता तब वह सडता है। आजकल धातुकी जगह कागजका व्यवहार किया जाता है, पर तुम यदि अपने कागजोंके पुलिंदेको अपनी दराजमें रख दो तो कुछ दिनोंके बाद तुम देखोगे कि तुम्हारी सारी पूंजी घिस गयी है, खा ली गयी है। कीडे-मकोडे जाली बुन कर तुम्हें दे देंगे और उसे ग्रहण करना तुम्हारे बैंक अस्वीकार कर देंगे।

ऐसे लोग और ऐसे धर्म हैं जो कहते हैं कि ईश्वर जिन लोगोंको प्यार करते हैं उन्हें गरीब बना देते हैं। मैं नहीं जानती कि यह सच है या नहीं, परन्तु एक बात जो सच है वह यह है कि जब कोई धनी होकर ही जन्म लेता है या जब कोई धनवान् हो जाता है, हर हालतमें जब किसीके पास बहुत, अर्थात् भौतिक धन बहुत होता है तब निश्चय ही यह इस बातका चिह्न नहीं है कि भगवान्ने उसे अपनी करुणाके लिये चुना है; यदि वह भगवान्की ओर सीधे रास्तेसे, सच्चे मार्गसे चलना चाहता है तो उसे काफी मात्रामें प्रायश्चित करनेकी आवश्यकता होती है।

धन संपदा एक शक्ति है; मैं तुम्हें एक बार पहले बतला चुकी हूं कि यह प्रकृतिकी एक शक्ति है। इसे व्यवहारके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चलते रहनेका एक साधन, एक गतिशील शक्ति होना चाहिये, ठीक जिस तरह कि बहनेवाला पानी एक गतिशाली शक्ति होता है। यह एक ऐसी चीज है जो उत्पादन संगठनमें सहायता करती है। यह व्यापारिक वस्तुओंके पूर्ण और मुक्त आवागमनके लिये एक सुविधा जनक साधन है क्योंकि मूलतः यह एक साधन ही है। और यह शक्ति उन्हीं लोगोंके हाथमें रहनी चाहिये जो यह जानते हैं कि इसका सर्वोत्तम संसाध्य उपयोग कैसे किया जा सकता है। दूसरे शब्दोंमें, ऐसे लोगोंके हाथोंमें रहनी चाहिये, जैसा कि मैं पहले कह चुकी हूं जिन्होंने अपने अंदरसे समस्त आसक्तिको दूर कर दिया है, जो कुछ कुछ इन दोनों चीजोंसे मुक्त हो चुके हैं। उसके साथ साथ वह दूर दृष्टि भी अवश्य जुडी होनी चाहिये जो पार्थिव जीवनकी आवश्यकताओंको संगठित करने और उन्हें पूरा करनेके लिये इस शक्तिका उपयोग करनेमें समर्थ हों।

इसके अतिरिक्त, यदि ऐसे लोगोंको एक उच्चतर आध्यात्मिक चेतना प्राप्त हो तो फिर वे पृथ्वी पर धीरे-धीरे एक ऐसी चीज निर्माण करनेमें इस शक्तिका व्यवहार कर सकते हैं जो भागवत शक्ति और भागवत करुणाको अभिव्यक्त करनेके योग्य होगी। ऐसा होने पर ही यह रुपये-पैसेकी, धन-सम्पत्तिकी शक्ति, अर्थकी यह शक्ति, जैसा कि मैंने कहा है, अभिशाप होनेके बदले, सबके मंगलके लिये आशीर्वाद बन जायेगी। कहावत है कि सबसे बुरे लोग ही सबसे अच्छे बनते हैं। मैं आशा करती हूं कि सबसे अच्छी चीज सबसे बुरी नहीं बनती, क्योंकि वह सचमुचमें दुःखदायी बात होगी।

महत्तर शक्ति जब बुरे रूपमें प्रयुक्त होती है तब वह बहुत बडी विपदा बन सकती है; वही शक्ति अच्छे रूपमें प्रयुक्त होने पर मंगलकारी वस्तु बन सकती है।

सब कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि किसी चीजका क्या उपयोग किया जाता है। प्रत्येक वस्तुका संसारमें एक स्थान है, एक कार्य है, एक सच्चा उपयोग है। परन्तु इस जगत्में जैसा कि यह है, बहुत थोडीसी चीजें ही अपने समुचित स्थानमें हैं। संसार एक भयावह अस्तव्यस्तताकी अवस्थामें है। यही कारण है कि यहां ये सब विपत्तियां, ये सब दुःख कष्ट हैं। यदि प्रत्येक चीज अपने अपने निजी स्थानमें हो, सब कुछ एक सुसमंजस स्थितिमें हो तो समूचा संसार जिस संकट और दुःख क्लेशकी स्थितिमें अब है, उसमें पडनेकी किसी आवश्यकताके बिना वह प्रगति कर सकता है।

● ● ●

हाईस्कूलोंमें शिक्षकोंकी नियुक्तिके लिये शास्त्रीय योग्यताओंकी मान्यता

मुंबई सरकारने सरकारी और अ-सरकारी हाईस्कूलोंमें शिक्षकोंकी नियुक्तिके लिये स्वाध्यायमंडल, पारडी की तीन साहित्यिक परीक्षाओंको मान्यता दी है। इनकी योग्यता निम्न प्रकार स्वीकृत की गई है—

स्वाध्यायमंडल किल्ला पारडी (जि. सूरत) की साहित्यिक परीक्षाएं—

साहित्यप्रवीण— एस. एस. सी./मेट्रिक के समान है,

साहित्यरत्न — इण्टर आर्ट्स के समान है, और

साहित्याचार्य— बी. ए. के समान है।

बंबई तथा मध्यप्रदेश सरकारने हमारे संस्कृत प्रचारमें परीक्षाओंको मान्यता देकर जो हमें प्रोत्साहित किया है उसके लिये हम उनको हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

—परीक्षा-मन्त्री

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देवी--देवताओंकी मूर्तियां

(श्री माताजी)

★

क्या देवी-देवताओंकी प्रचलित मूर्तियां यथार्थ सद्वस्तुकी दृष्टिसे ठीक हैं ?

अच्छा बतलाओ तो, जब कोई छोटासा बच्चा किसी चीजका चित्र बनाता है वह क्या उस चीजसे मिलता-जुलता है ? यहां बात प्रायः ऐसी ही है या इससे भी अधिक बुरी है । क्योंकि बच्चा सरल और सच्चा होता है, जब कि मूर्ति-निर्माता संस्कारों और पूर्व निर्धारित भावनाओंसे भरा होता है, सुनी या पढी हुई चीजोंसे भरपूर होता है । और फिर वह अपनी रचनाओंसे बंधा होता है । परन्तु कभी-कभी जहां-जहां, अवश्य ही बहुत कम, आंतर दृष्टिसे संपन्न, अंतरात्माकी एक महान् अभीप्सा तथा महान् पवित्रतासे भरे हुए कलाकार दिखायी देते हैं, वे ऐसी चीजें तैयार करते हैं जो ग्रहणीय होती हैं । परन्तु ऐसे लोग अपवाद ही होते हैं, साधारण नियम तो इसके विपरीत ही होता है ।

मैंने इनमेंसे कुछ आकारोंको प्राणमय लोकमें और मनोमय लोकमें भी देखा है । वे सचमुचमें मनुष्यकी रचनाएं हैं । एक दिव्य शक्ति है जो परेके लोकसे अभिव्यक्त होती है । पर अज्ञानके इस त्रिविध जगत्में स्वयं भगवान्को भी मनुष्य अपनी ही आकृतिके अनुरूप रचता है और जो सत्ताएं यहां प्रकट होती हैं वे कम या अधिक रूपमें सृजनशील मानव-विचारका ही परिणाम होती हैं । अतएव कभी-कभी हमें ऐसी चीजें मिलती हैं जो सचमुचमें भयावह होती हैं ।

मैंने ऐसी रचनाएं देखी हैं जो कितनी अंधकारपूर्ण, कितनी, दुर्बोध और कितनी अभिव्यंजना शून्य है ! कुछ ऐसी दिव्य सत्ताएं हैं जिनके साथ दूसरोंकी अपेक्षा बहुत अधिक अन्याय किया गया है । उदाहरणके लिये इस बेचारी महाकालीको ले लो । मनुष्यने उसे कैसा दिया है, जंगली जैसी भयंकर, एक कल्पनातीत दुःस्वप्न ! ऐसी रचनाएं बहुधा अत्यन्त निम्नतम जगत्में, निम्नतम प्राण लोकमें रहती हैं; और अगर इसमें मूल सत्ताका कुछ भी अंश हो भी तो वह ऐसी एक दूरकी छाया भर ही होती है जिसे कठिनाईसे पहचाना जा सकता है ।

और फिर भी इसी चीजको मानव चेतना खींच लाती है । उदाहरणार्थ, जब कोई मूर्ति तैयार होती है और प्रतिष्ठित की जाती है और पुरोहित उसमें एक आकारको, किसी देवताकी एक अंशविभूतिको, एक आंतरिक आवाहनके द्वारा-साधारणतया इस विषयकी एक पूरी पूजा-पद्धति होती है- उतार लाता है, और यदि पुरोहित आह्वान करनेकी शक्ति रखने वाला कोई व्यक्ति होता है, तब वह कार्य सफल होता है (जैसा कि रामकृष्णने काली मंदिरमें किया था) । परन्तु साधारण तौर कर पुरोहित ऐसे लोग होते हैं जो अत्यन्त सामान्य विचार रखते हैं और उनकी शिक्षा-दीक्षा अत्यन्त परम्परागत होती है; जब वे देवताओंकी बात सोचते हैं तब वे उन्हें ऐसे रूप और गुण दे देते हैं जो प्रचलित होते हैं; जो सामान्यतया प्राणमय लोककी सत्ताओंसे संबंध रखते है, परन्तु जो किसी भी रूपमें पीछेकी ओर विद्यमान सत्ताओंके सत्यको प्रकट नहीं करते ।

मंदिरोंकी या घरोंके देवताओंकी सभी मूर्तियोंमें, जिन्हें बहुतसे लोग पूजते हैं, ऐसी सत्तायें रहती हैं जो केवल यही जानती हैं कि किस प्रकार तुम्हें दुःख और विपत्तिमें ले जाया जा सकता है । वे उस देवत्वसे अत्यन्त दूर होती हैं जिसकी लोग पूजा करना चाहते हैं । कुछ परिवारोंमें ऐसी काली मूर्तियां हैं जो सच्ची राक्षसियां हैं । मैंने कुछ लोगोंको यह भी सलाह दी है कि वे ऐसी मूर्तिको गंगामें फेंक दें जिससे कि वे उससे निकलनेवाले बुरे प्रभावसे मुक्त हो जायें । परन्तु कोई सन्देह नहीं कि इसमें दोष सदा मनुष्यका ही है, देवत्वका नहीं । क्योंकि मनुष्य अपने देवताओंको अपनी ही प्रतिमूर्तिके रूपमें रचनेकी इतनी अधिक इच्छा करता है !

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हमारी प्रयोग शाला

भूदत्त

✶

श्री अरविन्द शिक्षा केन्द्रका लक्ष्य छात्रको समग्र शिक्षा देना है। वह शिक्षा उसके चैत्य पुरुषसे लेकर स्थूल शरीर तकके विकासमें सहायक होती है। इसी उद्देश्यको दृष्टिमें रखते हुए यहां आर्ट सायंस दोनोको बराबर महत्व दिया जाता है।

हम इस लेखमें अपनी विज्ञानकी प्रयोगशालाके बारेमें कुछ बतानेका प्रयास करेंगे। एक समय था जब विज्ञान भी अन्य मानसशास्त्रोंकी तरह केवल विचारके आधार पर ही खडा हुआ था पर अब जमाना बदल चुका है और छोटीसे छोटी बातके लिए भी क्रियात्मक प्रयोग करनेकी जरूरत होती है। आजका वैज्ञानिक कसौटी पर कसे बिना किसी चीजको माननेके लिए तैयार नहीं है। हां यह और बात है कि वैज्ञानिक प्रयोग अपनी मर्यादासे बाहर नहीं जा सकते, अपनेसे ऊपरके क्षेत्रकी वस्तुओंके बारेमें फैसला नहीं कर सकते।

भौतिक विद्याओंका अध्ययन कर सकनेके लिए हमारे शिक्षा केन्द्रमें एक विज्ञान विभाग है जिसमें अनेक प्रयोगशालाएं हैं। हमारी मुख्य प्रयोगशाला एक दुमंजिल मकान में है। नीचेकी मंजिलमें प्रकृति निरीक्षण और जीव जन्तु आदि देखनेकी सुविधा है। यहां मानव शरीरसे लेकर फूल पत्ते, समुद्री जन्तु, खनिज आदिका निरीक्षण और अध्ययन किया जाता है। छोटे बच्चोंके लिए यहीं एक कौतुकालय है जिसमें भिन्न भिन्न प्रकारकी मिट्टियां, चट्टानोंके टुकडे, धातुएं, पक्षियोंके पंख, सुखाकर सुरक्षित किये हुए फूल संग्रहीत हैं। इनके अतिरिक्त जीव जन्तु, तोते, गौरैया, सांप, नेवले, गिलहरी आदि भी पाले जाते हैं जो बच्चोंके हाथसे खाना लेनेके अभ्यस्त हो गये है

एक छोटासा जल जीवालय भी इस विभागकी शोभा बढाता है। बालक जब कभी घूमने जाते हैं तो नयी नयी चीजें इकट्ठी कर लाते हैं। इस विभागमें रस लेनेवाले और काम करनेवाले बच्चोंको कई बार लकडीकी छोटी मोटी चीजोंकी जरूरत पडती है। उन जरूरतोंको पूर्ण करनेके लिए एक छोटीसी बढईकी दुकान भी है जिसमें स्वयं विद्यार्थी ही काम करते है। यहां छोटे बच्चे अपनी मर्जीके अनुसार काम करते रहते हैं। देखा गया है कि वहां काम करते हुए नटखट बच्चे भी अपने आपको और अपने वातावरणको भूल जाते हैं और काम पूरा किये बिना नहीं उठते।

प्रयोगशालाकी ऊपरकी मंजिलमें भौतिकी और रसायन शास्त्रोंके प्रयोग होते हैं। वहां एक छोटासा तिमिर कोष्ठ है जिसमें प्रकाश सम्बन्धी परीक्षण होते हैं। उसके साथ लगे हुए बडे कमरेमें यांत्रिकी (Mechanico) विद्युत्शास्त्र, चुम्बक आदिके प्रयोग किये जाते हैं, दूसरी और रसायन विभागमें एक छोटासा कमरा है जहां तराजू आदि रहती जिनसे बहुत बारीक काम किया जा सकता है। बडे कमरेमें नाना प्रकारके यंत्र हैं जिनसे अध्ययन और अन्वेषण कार्यमें सहायता मिल सके। वहां बाष्प भाण्ड (Boilers), कई प्रकारकी भट्टियां, अर्क निकालनेके यंत्र आदि हैं।

यहां पर अनेक प्रकारके परीक्षण होते रहते हैं। यहां छात्रको परीक्षण करनेकी पूरी सुविधाएं प्राप्त हैं वह सिद्धान्त पढकर परीक्षणके द्वारा उसको जांचता नहीं है अपितु परीक्षण कर करके अपने आप सिद्धान्त तक पहुंचनेका प्रयास करता है। प्रयास इस बातके लिए किया जा रहा है कि छात्रके सिरपर शिक्षाका भार न लादा जाए। वह अपने आप परिश्रम करे और विद्याको हस्तगत करता जाए।

भूल सुधार

[जनवरी मासके वैदिकधर्मके ब्रह्मर्षि उपाधिदान समारोह अंकके पृष्ठ ५७ पर विदेशी प्रतिनिधियोंकी नामावलिमें लद्दाखका भी नाम है। पर वस्तुतः यह लद्दाखका प्रदेश भारतका अपना ही प्रदेश है। अतः लद्दाखको विदेशोंकी नामावलीमें रखनेका हमें खेद है, और इससे जिन भारतीयोंके स्वाभिमानको चोट पहुंची उसके लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

—सम्पादक]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हमारा रंग मञ्च

अञ्जना शर्मा

मनुष्यके प्रत्येक कामसें कलाका एक स्थान होता है और यदि वह अपने अंदरके कलाकारको विकसित होनेका अवसर दे तो उसके जीवनसें कलाका आविर्भाव हो सकता है। हमारे शिक्षा केन्द्रसें जहां विद्यार्थीयोंको हर प्रकारकी प्रगति करनेकी सुविधा दी जाती है। कलाका एक विशेष स्थान है। चित्र कला, गायन, वादनके साथ साथ नृत्य नाटक आदिको भी काफी महत्व दिया जाता है।

सुन्दर लता विटपोंसे सुशोभित एक बडेसे मैदानसें हमारी नाव्यशाला है। उसके तीन दरवाजों पर झुकी हुई लताओंकी शाखाएं आगन्तुकोंका स्वागत करती हैं और फूल अपनी महकसे उसका मन मोह लेते हैं। नाव्यशालाके अन्दर एक बडीसी स्टेज है उसके पास ही लडके लडकियोंके वेशभूषा बदलनेके कमरे है। स्टेजको आवश्यकताके अनुसार छोटा बडा किया जा सकता है। उस पर तरह तरहके पर्दों और रोशनियोंकी व्यवस्था है। हमारे शिक्षा केन्द्रका आरम्भ पहली दिसम्बरको हुआ था। और हर वर्ष उसका उत्सव मनानेके लिए पहली दिसम्बरको नाटक, नाना, खेल कूद आदिका आयोजन होता है। आश्रमके सभी विभागोंकी तरह इसका आरम्भ भी बहुत छोटे रूपमें हुआ था।

विद्यालयके प्राङ्गणमें छोटासा कार्यक्रम हो जाया करता था। पर धीरे धीरे सब ओरसे प्रगति होती गयी और हमारा कार्यक्रम भी मत्स्यावतारकी तरह बढता गया। हमारी नाव्यशाला भी इसी वृद्धिका परिणाम है, परन्तु अब यह विशाल नाटयशाला भी छोटी पडने लगी है। इसमें १२०० व्यक्ति बैठ सकते हैं। और पहली दिसम्बरका कार्यक्रम दो बार करना पडता है। पहली तारीखको आश्रम वासियोंके लिए और तीसरीको आश्रमसे सम्बन्ध रखनेवाले नगरवासियोंके लिए। खेल कूदका कार्यक्रम भी बहुत बढ गया था इस लिये अब उसका पृथक् आयोजन २ दिसम्बरको किया जाता है।

हमारी नाव्यशालामें अंग्रेजी, फ्रेंच, बंगला, हिंदी आदिके नाटक होते हैं कभी कभी बाहरसे संस्कृत नाटय मंडली भी अपने नाटक दिखाने आया करती है। इनके अतिरिक्त कभी कभी सुश्री चन्द्रलेखा, गोपीनाथ आदि भी अपने नृत्यको यहां दिखाने आते हैं। हमारे नाटकोंके विषय प्रायः ऐसे होते हैं जिनसे वे हमारे जीवनमें सहायक हो सके। हम हिंदीमें प्रताप प्रतिज्ञा, भक्त ध्रुव, तथा तुलसीदासके नाटक कर चुके हैं। अंग्रेजीमें श्री अरविंदके लिखे हुए नाटक किये जाते हैं। फ्रेंचमें माताजीकी लिखी हुई नाटिकाएं अथवा कोई अन्य चीज ली जाती है। नाटक चुनते हुए इस बातका ख्याल रखा जाता है कि वह चेतनाको ऊँचा उठानेमें सहायक हो।

उदाहरणके लिए, एक बार 'भारतका आध्यात्मिक विकास' नामक नाटक किया गया था जिसमें कुछ इस प्रकार दिखाया गया था। भारतमाता विराजमान है और समुद्र उनके चरण धो रहा है भारत शक्ति है और समुद्र जीवन। समुद्रमेंसे ब्रह्मा विष्णु और महेश प्रकट हुए। सृष्टिका आरम्भ हुआ। अगले दृश्यमें हम वैदिक ऋषियोंके दर्शन करते हैं जो भारत मांका आवाहन कर रहे हैं। भारत माता उन्हें दर्शन देती है और वे जान पाते हैं कि भारत पहाडों नदियां या ईंट पत्थरका नाम नहीं है, भारत एक शक्ति है जो सीधी भगवान्से आयी है। इसके बाद हमें भगवान् रामके दर्शन होते हैं वे मां दुर्गाकी पूजा कर रहे हैं। यह कथा बंगाल रामायणसे ली गयी है। उन्हें एक सौ आठ कमल चढाते हैं पर पूजाके समय वे देखते हैं कि एक कमल कहीं गायब हो गया है। वे बिना सङ्कोच अपना नेत्र कमल निकाल कर मांके चरणों पर रखते जाते हैं कि मां उनका हाथ पकड लेती है। उनकी पूजा सफल होती है और दुर्गा उन्हें वरदान देती हैं।

इसके बाद हम चिन्मय धाम वृन्दावनसे जाते हैं वहां श्री कृष्णका चिरन्तन रास चल रहा है। वहांसे होते हुए हम कुरुक्षेत्रके मैदानमें आते हैं जहां दिव्य गुरु अपने मानव शिष्यसे कह रहा है 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज,' उससे अगले दृश्यमें भारत पर अनेक आक्रमण होते हैं फिर भी भारत शक्ति पराजित नहीं होती वह बुद्ध और शङ्कर जैसोंको जन्म देती है। शङ्कर कहीं जा रहे हैं मार्गमें एक अछूत स्त्रीको देखकर कहते हैं हट जा रास्ता छोड दे। स्त्री उत्तर देती है क्यों? 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' फिर स्पृश्यास्पृश्यका सवाल कैसा? आचार्यकी आंखें खुल जाती हैं और वह स्त्री भारत मांका रूप दिखाती है:

इसके बादके दृश्यमें रामकृष्ण और विवेकानन्द आते हैं और फिर श्री अरविंदका चित्र दिखाया जाता है। अन्तमें माताजीकी एक प्रार्थना विभिन्न भाषाओंमें बोली जाती है, और नाटक समाप्त होता है। इसी प्रकार 'सत्यकी खोज,' 'प्रेम, और मृत्यु,' 'तमसो मा ज्योतिर्गमय,' आदि हैं पर विस्तार भयसे इत्यलम्।

● ● ●

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री अरविंदाश्रम क्या है?

(रवीन्द्र)

☆

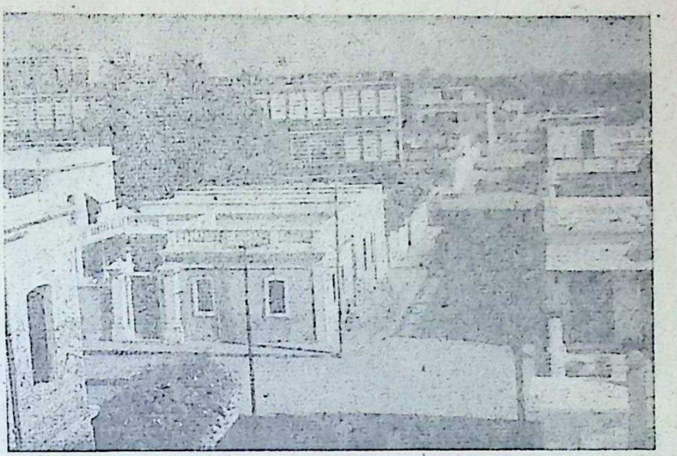

अरविंदाश्रमका विहंगम दृश्य

श्री अरविंदाश्रम प्रचलित अर्थोंमें एक संस्था नहीं है। यह एक परिवार है। हम कह सकते है कि यह हमारा गुरुकुल है। श्री अरविंद ४ अप्रैल १९१० को अपने मुठ्ठी भर साथियोंको लेकर पाण्डीचेरी आये थे। उनके साथ कुछ युवक थे जो उनके सहवाससे लाभ उठाना चाहते थे अथवा उनकी सेवा करनेके इच्छुक थे। उन दिनों यहां तरह-तरहकी कठिनाइयोंका सामना करना पडता था।

जो घर फूंके आपनो, सो चले हमारे संग।

की बात थी। १९१४ की २९ मार्चको श्री माताजीने पहली बार यहां पदार्पण किया और श्री अरविंदसे भेंटकी। दोनोंने एक दूसरेको पहचाना और भावी कार्यक्रम निश्चित हो गया। पर कई बाधाओंके कारण माताजीको एक बार जाना पडा और वे दूसरी बार २४ अप्रैल १९२० को यहां आई। साधनाका कार्य तेज होगया और १९२६ की २४ नवम्बरको माताजी और श्री अरविंदने सिद्धि प्राप्त की। उस दिनसे श्री अरविंदने लोगोंसे मिलना-जुलना छोड दिया और इस नीडकी सारी व्यवस्था माताजीके हाथोंमें आयी। हम कह सकते हैं कि इसी दिनसे श्री अरविंदाश्रमके वर्तमान रूपका आरम्भ हुआ।

लोग घर-द्वार छोड कर भगवान्के मार्ग पर चलनेके लिये, अपनी नौकाएं जला कर मंझधारमें कूदने लगे। माताजीने साक्षात् महालक्ष्मी और अन्नपूर्णाका रूप धारण किया और सबकी देख-भाल करने लगीं। लोग एक बार दर्शनके लिये आते और यहींके हो जाते। माताजी उनकी सब आवश्यकताओंको पूरा करती थीं ताकि वे पूरी तरह निश्चिन्त होकर भगवान्के काममें लग सकें। यह क्रम चलता जा रहा है और अब यहां बाल-वृद्ध सब मिला कर १२०० के लगभग व्यक्ति हैं।

श्री अरविंदाश्रममें प्रविष्ट होनेके लिये कोई नियम नहीं है। यहां पर उद्दालक, आरुणि अथवा उपमन्यु आदिकी तरह कडी परीक्षाओंमेंसे उत्तीर्ण नहीं होना पडता, जो श्री अरविंदको अपना गुरु मानते हों, जो माताजीके बालक बनना चाहते हों, जिनके अंदर कुछ आग हो वे श्री अरविंद के परिवारके सदस्य बन सकते हैं One who chooses the divine, is choosen by the Divinity. आप अपने मनमें एक बार संकल्प कर लीजिये and the heavens reject not. स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्। परन्तु यह तो आरम्भ है। साधकको अपना सारा जीवन, अपने प्रत्येक क्रिया भगवान्को समर्पित करनी होती है। वह खाए तो प्राणाग्निहोत्र हो, वह सोये तो उसकी चेतना जागरूक रहे। उसकी प्रत्येक क्रिया, उसका प्रत्येक भाव अन्तरात्माको प्रतिबिम्बित करता हो। उसे तबतक अपना प्रयास करते रहना पडता है जबतक उसकी सारी चेतना अन्तरात्माकी चेतना न बन जाय। वह पग-पग पर सत्यका ग्रहण और असत्यका त्याग करता रहे। परन्तु यह सब सहज नहीं है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हमारा रंग मञ्च

अञ्जना शर्मा

मनुष्यके प्रत्येक कार्यमें कलाका एक स्थान होता है और यदि वह अपने अंदरके कलाकारको विकसित होनेका अवसर दे तो उसके जीवनमें कलाका आविर्भाव हो सकता है। हमारे शिक्षा केन्द्रमें जहां विद्यार्थीयोंको हर प्रकारकी प्रगति करनेकी सुविधा दी जाती है । कलाका एक विशेष स्थान है । चित्र कला, गायन, वादनके साथ साथ नृत्य नाटक आदिको भी काफी महत्त्व दिया जाता है ।

सुन्दर लता विटपोंसे सुशोभित एक बडेसे मैदानमें हमारी नाट्यशाला है । उसके तीन दरवाजों पर झुकी हुई लताओंकी शाखाएं आगन्तुकोंका स्वागत करती हैं और फूल अपनी महकसे उसका मन मोह लेते हैं । नाट्यशालाके अन्दर एक बडीसी स्टेज है उसके पास ही लडके लडकियोंके वेशभूषा बदलनेके कमरे है । स्टेजको आवश्यकताके अनुसार छोटा बडा किया जा सकता है । उस पर तरह तरहके पर्दों और रोशनियोंकी व्यवस्था है । हमारे शिक्षा केन्द्रका आरम्भ पहली दिसम्बरको हुआ था । और हर वर्ष उसका उत्सव मनानेके लिए पहली दिसम्बरको नाटक, नाना, खेल कूद आदिका आयोजन होता है । आश्रमके सभी विभागोंकी तरह इसका आरम्भ भी बहुत छोटे रूपमें हुआ था ।

विद्यालयके प्राङ्गणमें छोटासा कार्यक्रम हो जाया करता था । पर धीरे धीरे सब ओरसे प्रगति होती गयी और हमारा कार्यक्रम भी मत्स्यावतारकी तरह बढता गया । हमारी नाट्यशाला भी इसी वृद्धिका परिणाम है, परन्तु अब यह विशाल नाटयशाला भी छोटी पडने लगी है । इसमें १२०० व्यक्ति बैठ सकते हैं । और पहली दिसम्बरका कार्यक्रम दो बार करना पडता है । पहली तारीखको आश्रम वासियोंके लिए और तीसरीको आश्रमसे सम्बन्ध रखनेवाले नगरवासियोंके लिए । खेल कूदका कार्यक्रम भी बहुत बढ गया था इस लिये अब उसका पृथक् आयोजन २ दिसम्बरको किया जाता है ।

हमारी नाट्यशालामें अंग्रेजी, फ्रेंच, बंगला, हिंदी आदिके नाटक होते हैं कभी कभी बाहरसे संस्कृत नाट्य मंडली भी अपने नाटक दिखाने आया करती है । इनके अतिरिक्त कभी कभी सुश्री चन्द्रलेखा, गोपीनाथ आदि भी अपने नृत्यको यहां दिखाने आते हैं । हमारे नाटकोंके विषय प्राय: ऐसे होते हैं जिनसे वे हमारे जीवनमें सहायक हो सके । हम हिंदीमें प्रताप प्रतिज्ञा, भक्त ध्रुव, तथा तुलसीदासके नाटक कर चुके हैं । अंग्रेजीमें श्री अरविंदके लिखे हुए नाटक किये जाते हैं । फ्रेंचमें माताजीकी लिखी हुई नाटिकाएं अथवा कोई अन्य चीज ली जाती है । नाटक चुनते हुए इस बातका ख्याल रखा जाता है कि वह चेतनाको ऊँचा उठानेमें सहायक हो ।

उदाहरणके लिए, एक बार 'भारतका आध्यात्मिक विकास' नामक नाटक किया गया था जिसमें कुछ इस प्रकार दिखाया गया था । भारतमाता विराजमान है और समुद्र उनके चरण धो रहा है भारत शक्ति है और समुद्र जीवन । समुद्रमेंसे ब्रह्मा विष्णु और महेश प्रकट हुए । सृष्टिका आरम्भ हुआ । अगले दृश्यमें हम वैदिक ऋषियोंके दर्शन करते हैं जो भारत मांका आवाहन कर रहे हैं । भारत माता उन्हें दर्शन देती है और वे जान पाते हैं कि भारत पहाडों नदियां या ईंट पत्थरका नाम नहीं है, भारत एक शक्ति है जो सीधी भगवान्से आयी है । इसके बाद हमें भगवान् रामके दर्शन होते हैं वे मां दुर्गाकी पूजा कर रहे हैं । यह कथा बंगाल रामायणसे ली गयी है । उन्हें एक सौ आठ कमल चढाते हैं पर पूजाके समय वे देखते हैं कि एक कमल कहीं गायब हो गया है । वे बिना सङ्कोच अपना नेत्र कमल निकाल कर मांके चरणों पर रखते जाते हैं कि मां उनका हाथ पकड लेती है । उनकी पूजा सफल होती है और दुर्गा उन्हें वरदान देती हैं ।

इसके बाद हम चिन्मय धाम वृन्दावनसे जाते हैं वहां श्री कृष्णका चिरन्तन रास चल रहा है । वहांसे होते हुए हम कुरुक्षेत्रके मैदानमें जाते हैं जहां दिव्य गुरु अपने मानव शिष्यसे कह रहा है 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज,' उससे अगले दृश्यमें भारत पर अनेक आक्रमण होते हैं फिर भी भारत शक्ति पराजित नहीं होती वह बुद्ध और शङ्कर जैसोंको जन्म देती है । शङ्कर कहीं जा रहे हैं मार्गमें एक अछूत स्त्रीको देखकर कहते हैं हट जा रास्ता छोड दे । स्त्री उत्तर देती है क्यों ? 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' फिर स्पृश्यास्पृश्यका सवाल कैसा ? आचार्यकी आंखें खुल जाती हैं और वह स्त्री भारत मांका रूप दिखाती है :

इसके बादके दृश्यमें रामकृष्ण और विवेकानन्द आते हैं और फिर श्री अरविंदका चित्र दिखाया जाता है । अन्तमें माताजीकी एक प्रार्थना विभिन्न भाषाओंमें बोली जाती है, और नाटक समाप्त होता है । इसी प्रकार 'सत्यकी खोज,' 'प्रेम, और मृत्यु,' 'तमसो मा ज्योतिर्गमय,' आदि हैं पर विस्तार भयसे इत्यलम् ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री अरविंदाश्रम क्या है ?

(रवीन्द्र)

*

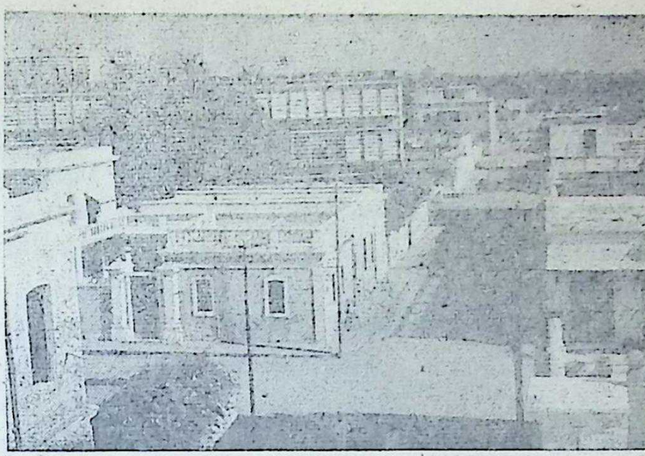

अरविंदाश्रमका विहंगम दृश्य

श्री अरविंदाश्रम प्रचलित अर्थोंमें एक संस्था नहीं है। यह एक परिवार है। हम कह सकते है कि यह हमारा गुरुकुल है। श्री अरविंद ४ अप्रैल १९१० को अपने मुट्ठी भर साथियोंको लेकर पाण्डीचेरी आये थे। उनके साथ कुछ युवक थे जो उनके सहवाससे लाभ उठाना चाहते थे अथवा उनकी सेवा करनेके इच्छुक थे। उन दिनों यहां तरह-तरहकी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता था।

जो घर फूंके आपनो, सो चले हमारे संग।

की बात थी। १९१४ की २९ मार्चको श्री माताजीने पहली बार यहां पदार्पण किया और श्री अरविंदसे भेंटकी। दोनोंने एक दूसरेको पहचाना और भावी कार्यक्रम निश्चित हो गया। पर कई बाधाओंके कारण माताजीको एक बार जाना पड़ा और वे दूसरी बार २४ अप्रैल १९२० को यहां आईं। साधनाका कार्य तेज होगया और १९२६ की २४ नवम्बरको माताजी और श्री अरविंदने सिद्धि प्राप्त की। उस दिनसे श्री अरविंदने लोगोंसे मिलना-जुलना छोड दिया और इस नीडकी सारी व्यवस्था माताजीके हाथोंमें आयी। हम कह सकते हैं कि इसी दिनसे श्री अरविंदाश्रमके वर्तमान रूपका आरम्भ हुआ।

लोग घर-द्वार छोड कर भगवान्के मार्ग पर चलनेके लिये, अपनी नौकाएं जला कर मंझधारमें कूदने लगे। माताजीने साक्षात् महालक्ष्मी और अन्नपूर्णाका रूप धारण किया और सबकी देख-भाल करने लगीं। लोग एक बार दर्शनके लिये आते और यहींके हो जाते। माताजी उनकी सब आवश्यकताओंको पूरा करती थीं ताकि वे पूरी तरह निश्चिन्त होकर भगवान्के काममें लग सकें। यह क्रम चलता जा रहा है और अब यहां बाल-वृद्ध सब मिला कर १२०० के लगभग व्यक्ति हैं।

श्री अरविंदाश्रममें प्रविष्ट होनेके लिये कोई नियम नहीं है। यहां पर उद्दालक, आरुणि अथवा उपमन्यु आदिकी तरह कडी परीक्षाओंमेंसे उत्तीर्ण नहीं होना पडता, जो श्री अरविंदको अपना गुरु मानते हों, जो माताजीके बालक बनना चाहते हों, जिनके अंदर कुछ आग हो वे श्री अरविंदके परिवारके सदस्य बन सकते हैं One who chooses the divine, is choosen by the Divinity. आप अपने मनमें एक बार संकल्प कर लीजिये and the heavens reject not. स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्। परन्तु यह तो आरम्भ है। साधकको अपना सारा जीवन, अपने प्रत्येक क्रिया भगवान्को समर्पित करनी होती है। वह खाए तो प्राणाग्निहोत्र हो, वह सोये तो उसकी चेतना जागरूक रहे। उसकी प्रत्येक क्रिया, उसका प्रत्येक भाव अन्तरात्माको प्रतिबिम्बित करता हो। उसे तबतक अपना प्रयास करते रहना पडता है जबतक उसकी सारी चेतना अन्तरात्माकी चेतना न बन जाय। वह पग-पग पर सत्यका ग्रहण और असत्यका त्याग करता रहे। परन्तु यह सब सहज नहीं है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पराञ्च खानि व्यतृणत् स्वयंभु तस्मात परां पश्यति नान्तरात्मन् । कश्चित् धीरः प्रत्यगात्मानमैच्छत आवृत्त चक्षु अमृतत्वमिच्छन् ॥

श्री अरविंदके योगमें प्राचीन परिपाटियोंके अनुसार जीवनका परित्याग करके मोक्ष या अपवर्ग पाना अथवा आवागमनसे पीछा छुडवाना लक्ष्य नहीं है। पूर्वयोगके लक्ष्यके बारेमें श्री अरविंदने कहा है। ' हमें अब कौनसी नयी वस्तु प्राप्त करनी है ?

प्रेम— क्योंकि अभीतक तो हमने केवल द्वेष और आत्म-सन्तोष ही पाया है।

ज्ञान— क्योंकि अभीतक तो हमें केवल स्खलन, अवलोकन और विचार-शक्ति ही प्राप्त हुई है।

आनन्द— क्योंकि हम अभी तक सुख-दुःख और उदासीनता ही प्राप्त कर पाए हैं।

शक्ति— क्योंकि अभीतक तो निर्बलता, प्रयत्न और पराजित विजय ही हमारे पल्ले पडी है।

जीवन— अभी तक हमने जन्म, वृद्धि और मरण ही तो पाया है और हमें प्राप्त करना है ऐक्य, क्योंकि अभी तक युद्ध और संघकी ही उपलब्धि हुई है ना !'

एक शब्दमें कहें तो हमें भगवान्‌को पाना है और अपने आपको उसके दिव्यस्वरूपकी प्रतिमाके रूपमें फिरसे गढना है।'

हम कह सकते हैं कि यह आश्रम उपयुक्त लक्ष्यको सामने रखकर एक न या जीवन बढनेकी प्रयोगशाला है। जैसे वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशालामें भांति भांतिके द्रव्य इकट्ठा करते हैं उसी तरह वैज्ञानिक माताजी और श्री अरविंदने भी अपने आश्रममें तरह तरहके लोग इकट्ठे किये हैं। बाहरसे आनेवाले हर प्रकारके आदमी यहां पर अपने वर्गके लोगोंको पायेंगे। यहां सोना भी मिल सकता है और पत्थर भी यह सब खोजनेवालेकी दृष्टि पर निर्भर है। परन्तु वैज्ञानिकको अपनी सभी वस्तुएं एकसी प्रिय होती हैं और आवश्यक लगती हैं जो काम कर्बनसे हो सकता है वहां सोना किस कामका ? इसी तरह जिन्होंने समस्त मानव जातिको बदलनेका बीडा उठाया है उन्हें अपने आप यहां इस कीचडमें धंसना ही पडता है केवल सात्विक लोगों को अपने साथ लेकर इस महान् कार्यकी पूर्ति करना सम्भव न होता।

परन्तु अभीप्सा करनेवाले हर व्यक्तिको घर-द्वार छोड कर यहां आ बैठनेके लिये नहीं कहा जाता। ऐसा कोई गज नहीं है जिससे माप कर कह दिया जाय कि अमुक व्यक्ति यहां रहने योग्य है और अमुक नहीं। हर एक व्यक्तिकी व्यक्तिगत आवश्यकता, उसकी आन्तरिक स्थिति और अन्य परिस्थितियोंको देखकर माताजी यह ठीक करती हैं कि कौन यहां रह सकता है और कौन नहीं। माताजीने कहा है, " जीवनके प्रति घृणासे प्रेरित होकर यहां योग करनेके लिये नहीं आना चाहिये। जीवनकी कठिनाइयोंसे भाग कर भी यहां नहीं आना चाहिये। भागवत प्रेम और भागवत सुरक्षा पानेके लिये भी यहां आनेकी जरूरत नहीं है क्योंकि अगर तुम्हारी आन्तरिक स्थिति ठीक है तो ये चीजें हर जगह बैठे-बिठाये मिल सकती हैं।

जब व्यक्ति अपने आपको पूरी तरह भगवान्‌की सेवामें लगा देना चाहे, अपने आपको भगवान्‌के कामके लिये पूर्णतः न्यौछावर कर देना चाहे, जो अपनी सेवाके बदले भगवान्‌से कुछ न मांगे— शायद अधिकाधिक सेवा और समर्पणके अवसर मांगे जा सकते हैं— अगर यह तो कहा जा सकता है कि तुम यहां रहनेके लिये तैयार हो और तुम्हें यहांके द्वार पूरी तरह खुले हुए मिलेंगे। "

आश्रममें रहनेवालोंके लिये विधि निषेधकी तालिका नहीं दी जाती। हर एकसे आशा की जाती है कि वह पग पग पर अपनी अन्तरात्माकी पुकार सुनकर उसके अनुसार कार्य करेगा। एक ही काम भिन्न भिन्न व्यक्तियोंके लिये भिन्न भिन्न रूप धारण कर सकता है जो एकके लिये अमृत है वही दूसरेके लिये विष हो सकता है। यहां हर एक काम भगवान्‌का है और उसीको समर्पित करके किया जाता है। इदं न ममकी बात है। काम शरीरके द्वारा की गई सर्वोत्तम प्रार्थना है इसी लिये कहा गया है Let us work as we pray. अगर काम समर्पण भावसे किया गया हो तो ' न कर्म लिप्यते नरे ' केवल इतना ही नहीं वह कर्म ऊपर उठाता और भगवान्‌की ओर ले जाता है।

आश्रममें पठन-पाठन, उच्च शिक्षा आदिसे लेकर कपडे धोने और जूते सीने तकके विभाग हैं और इनका बहुतसा काम आश्रम वासियों द्वारा ही किया जाता है, परन्तु उनका परिचय देनेके लिये अलग लेखोंकी आवश्यकता होगी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

१२ जनवरी जिनका जन्म–दिन था–

भारतके राज दूत

श्री स्वामी विवेकानन्द

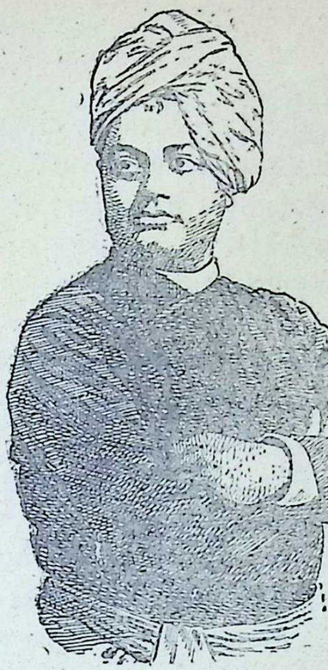

★

११ सितम्बर १८९३ की स्मरणीय दिन। अमेरिकाके मुख्य नगर शिकागोमें सर्व धर्म सम्मेलनके सिलसिलेमें अमेरिकी जनता बहुत बडी संख्यामें उपस्थित है। सभी धर्मोंके प्रतिष्ठित प्रतिनिधि मंच पर बैठे हैं, और एक एक प्रतिनिधि अपने–अपने धर्मकी श्रेष्ठता सिद्ध कर यथा स्थान चला जाता है; उन्हींमें एक अल्पायु व्यक्ति अपनी तेजस्वितासे सबको आकर्षित करता हुआ मंच पर आता है। शक्लसे भारतीय लगता है, गेरुआ परिधान है, परतंत्र देशका प्रतिनिधि है अतः जनतामें स्वभावतः ही घृणाके भाव पैदा हो जाते हैं।

वह व्यक्ति मंच पर आकर गंभीर आवाजमें श्रोताओंको सम्बोधित करता है 'अमेरिका निवासी भाइयों और बहिनों!' प्रत्येक प्रतिनिधिके मुंहसे " लेडीज एँन्ड जेण्टलमेन " के सम्बोधनको सुननेवाली जनता इस विलक्षण सम्बोधनसे चौंक उठती है और वक्ताका तालियोंसे स्वागत करती है। थोडे क्षण बाद वक्ताका वेदान्त विषय पर धारा प्रवाह भाषण जारी है और जनता मंत्र मुग्धसी उसके भाषणको पीतीसी चली जा रही है। यह ओजस्वी वक्ता था हमारे भारतका सच्चे अर्थोंमें राजदूत " स्वामी विवेकानन्द "।

हमारे चरित्र नायक नरेन्द्रनाथ, जो सन्यास ग्रहणके पश्चात् स्वामी विवेकानन्दके नामसे प्रसिद्ध हुए, का जन्म कलकत्तामें एक सुसम्पन्न वकील परिवारमें हुआ था। मांकी गोदमें बैठकर रामायण और महाभारतकी कहानियां सुनने वाले नरेन्द्रको बचपनसे ही विवाहके प्रति घृणा थी। इसी लिए राधाकृष्ण और सीताराम उनके आराध्य नहीं बन सके।

नरेन्द्रकी प्रतिभा तर्क तथा दर्शन शास्त्रकी ओर अग्रसर हुई, इसमें इनके पिता श्री विश्वनाथ दत्त भी बहुत बडे सहायक प्रमाणित हुए, जिन्होंने अनावश्यक नियंत्रणसे इनको एक पुस्तक–कीट बनाकर इनकी प्रतिभा कुण्ठित नहीं की।

कालेजमें प्रविष्ट होते समय इनकी अवस्था १८ वर्षकी थी पर इनकी दार्शनिक प्रतिभा वयापेक्षा कहीं अधिक प्रौढ थी। इनकी प्रतिभाके विषयमें इनके कालेजके अध्यक्ष विलियम हेस्टी, जो स्वयं भी दार्शनिक थे, के निम्न शब्द थे– " यह दर्शन शास्त्रका अत्युत्तम छात्र है। जर्मनी और इंगलैण्डके सारे विश्वविद्यालयोंमें एक भी ऐसा छात्र नहीं जो इसके समान मेधावी हो "। पाश्चात्य दार्शनिक मिल, स्पेन्सर, ह्यूमका गम्भीर अध्ययन इनको था। स्पेन्सर आदि नास्तिकोंके विचारोंने ईश्वरमें इनकी आस्थाको हिला दिया। ईश्वर विषय पर प्रवचन करनेवाले हर व्यक्तिसे इनका यही प्रश्न होता था– " श्रीमन्! क्या आपने कभी ईश्वरके दर्शन किए है " पर किसी भी प्रवचन-कर्त्तासे इन्हें सन्तोष–दायक उत्तर न मिल सका। पर " जिन खोजा तिन पाइयां " के अनुसार इनका समक्ष एक दक्षिणेश्वरके योगीसे हुआ, जो शरीरसे तो कृश, पर अध्यात्म ज्ञानमें बडे प्रकाण्ड पण्डित थे। नरेन्द्रका इनसे भी वही प्रश्न था, पर इस कृशयोगीसे उत्तर मिला अप्रत्याशित " हां, मैंने ईश्वरको साक्षात् किया है, यदि तुम चाहो तो तुम्हें भी करा सकता हूं "।

यह कृशकाय योगी थे श्री रामकृष्ण परमहंस। इस अप्रत्याशित उत्तरने एक नास्तिक युवकको एक आस्तिक योगीकी छत्र छायामें ला खडा किया। और इस छत्र छायाने नरेन्द्रका चोला बदल कर स्वामी विवेकानन्दके रूपमें संसारको एक अनुपम देन दी। विवेकानन्द नामका सुझाव उन्हें

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सर्व धर्म सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए अमेरिका जाते समय उनके मित्र राजा खाइब खेतरीने दिया था। और अमेरिकाकी यात्राके बाद ये इसी नामसे संसार प्रसिद्ध हो गए।

१५ अगस्त सन् १८८६ में अपने गुरुके समाधि ग्रहणके पश्चात् ये देश दर्शनके लिए निकल पडे। १८९२ की एक घटना है, श्री स्वामीजी बम्बईसे पूना जानेवाली गाडीके द्वितीय श्रेणीमें यात्रा कर रहे थे। उसी डिब्बेमें तीन महाराष्ट्रीय युवक " संन्यास " विषय पर बात कर रहे थे। उनमें दो युवक संन्यास पद्धतिके विरुद्ध थे और एक युवक समर्थक था। कुछ देर तक स्वामीजी उनके तर्क-वितर्कको सुनते रहे, अन्तमें स्वयं भी इस वार्तालापमें शामिल हो गए और सन्यासका समर्थन करनेवाले युवकका पक्ष लिया। युवक उनकी अंग्रेजीसे बडे प्रभावित हुए। और संन्यासका समर्थक युवक, जो लोकमान्य तिलक थे, उन्हें अपने घर ले गया। श्री स्वामीजी १० दिन तक लोकमान्यके यहां रहे, पर उन दस दिनोंमें तिलक स्वामीजीका नाम न जान सके। अमेरिकामें उनकी विश्वविख्यात सफलताके बाद ही श्री तिलकको पता चला कि वह स्वामी विवेकानन्द ही थे जो दस दिन तक उनके यहां अतिथि रहे।

इस प्रकार श्री स्वामीजीने प्रथम भारत भरका भ्रमण करके वेदान्तका प्रचार किया। और ३१ मई सन् १८९३ को सर्व धर्म सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए शिकागो (अमेरिका) के लिए रवाना हुए। अमेरिकाकी ही एक घटना है, कि एक शाम श्री स्वामीजी अमेरिकामें एक जगह घूम रहे थे, तभी उनकी प्रसिद्धि नहीं हो पाई थी, उनको गेरुये वस्त्रमें तथा एक भारतीय (जिन्हें उस समय पाश्चात्य देशवासी काले कुत्तेके नामसे पुकारते थे।) को देखकर एक स्त्रीने अपने पतिसे कहा, कि " पता नहीं ये काले भारतीय भिन्न भिन्न और अजीब पोशाक धारण कर अमेरिकाको क्यों खराब करने आ जाते है "।

श्री स्वामीजीके कानोंमें यह बात पडी पर वह शान्त रहे। विश्व धर्म सम्मेलनके बाद वही जोडा श्री स्वामीजीसे क्षमा मांगने गया, तब श्री स्वामीजीने कहा कि ' जबतक किसी मनुष्यको अन्दरसे न पहचान लो उसे भला या बुरा कुछ मत कहो '। उनकी विद्वत्ताके विषयमें अमेरिकाके सर्वाधिक प्रसिद्ध पत्र ' न्यूयार्क हेरल्ड ' ने लिखा—

' शिकागो धर्म सम्मेलनमें निःसन्देह विवेकानन्द ही सबसे महान् व्यक्ति हैं। उनका भाषण सुनकर हम अनुभव करते हैं कि इतने विद्वान् राष्ट्र (भारत) में मिशनरियोंको भेजना कितना मूर्खता पूर्ण है '

' बोस्टन इवनिंग ट्रान्सक्रिप्ट ' ने लिखा– ' वे वास्तवमें एक महापुरुष, उदार, सरल व ज्ञानी हैं। '

शिकागो महासभाकी विज्ञान सभाके सभापति मि. स्नेलका मत था– ' हिन्दू धर्मके एक मात्र आदर्श प्रतिनिधि स्वामी विवेकानन्द ही इस महा सभाके निर्विवाद रूपसे सर्वाधिक प्रतिभाशाली व लोक प्रिय व्यक्ति हैं '।

स्वामी विवेकानन्दके बडे बडे चित्र शिकागो नगरमें रास्ते रास्ते पर लटका कर उसके नीचे लिख दिया गया था ' सन्यासी विवेकानन्द '

इस प्रकार अभूतपूर्व और संसार व्यापी प्रतिष्ठा प्राप्त कर श्री स्वामीजी देश (भारत) लौटे। पर उनके शब्द ये थे—

' पाश्चात्य भूमिमें जानेके पूर्व मैं भारतसे प्रेम करता था। इस समय भारतका धूलिकण तक मेरे लिए पवित्र है। भारतकी वायु अब मेरी दृष्टिमें पवित्रताकी मूर्ति है। भारत इस समय मेरे लिए तीर्थ जैसा है। '

भारतमें आकर भी स्वामीजीका प्रचार कार्य चालू रहा। श्री स्वामीजीका स्वास्थ्य अब कार्याधिक्यसे दिनों दिन शिथिल होता जा रहा था। अतः पीछे भी उनके वेदान्त प्रचारका कार्य जारी रहे इसलिए ३१ मई सन् १८९७ में रामकृष्ण मिशनकी स्थापना की इसके बाद बरेली अम्बाला आदि नगर घूमते-घूमते ५ नवम्बरको लाहौर आए, वहां उनकी भेंट गणितके विद्वान् प्राध्यापक तीर्थ रामजीसे हुई। उनको स्वामीजीने दीक्षा दी और ये ही आगे जाकर स्वामी रामतीर्थजीके नामसे प्रसिद्ध हुए।

श्री स्वामीजीने एक बार फिर विदेश यात्राकी। पर इन यात्राओंने श्री स्वामीजीको बिल्कुल ही शिथिल बना दिया। और उन्हें शय्या ग्रहण करनेके लिए बाध्य होना पडा।

शुक्रवार ४ जुलाई सन् १९०२ ई.। बेलूरमें आश्रममें रातकी आरती समाप्त हो चुकी है। श्री स्वामीजी बिस्तर पर लेटे और ९ बजे उनका हाथ कांपा, थोडा अस्पष्ट क्रन्दन हुआ, और एक दीर्घ निश्वास अनन्तमें फैल गया और इस प्रकार एक और पवित्रतात्मा उस महान् आत्मासे जा मिली। महासमाधिके समय श्री स्वामीजीकी उम्र केवल ३९ वर्षकी थी। इस प्रकार श्री स्वामीजी सच्चे अर्थोंमें राजदूत थे, जिन्होंने अपने कार्योंसे परतंत्र भारतकी वास्तविक आत्माको विदेशियोंके सामने रखा और उनकी दृष्टिमें भारतकी प्रतिष्ठा बढाई।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDS

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Regd. No. G. 71

वेदके व्याख्यान

वेदोंमें नाना प्रकारके विषय हैं, उनको प्रकट करनेके लिये एक एक व्याख्यान दिया जा रहा है। ऐसे व्याख्यान २०० से अधिक होंगे और इनमें वेदोंके नाना विषयोंका स्पष्ट बोध हो जायगा।

मानवी व्यवहारके दिव्य संदेश वेद दे रहा है, उनको लेनेके लिये मनुष्योंको तैयार रहना चाहिये। वेदके उपदेश आचरणमें लानेसे ही मानवोंका कल्याण होना संभव है। इसलिये ये व्याख्यान हैं। इस समय तक ये व्याख्यान प्रकट हुए हैं।

१ मधुच्छन्दा ऋषिका अग्निमें आदर्श पुरुषका दर्शन।
२ वैदिक अर्थव्यवस्था और स्वामित्वका सिद्धान्त।
३ अपना स्वराज्य।
४ श्रेष्ठतम कर्म करनेकी शक्ति और सौ वर्षोंकी पूर्ण दीर्घायु।
५ व्यक्तिवाद और समाजवाद।
६ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।
७ वैयक्तिक जीवन और राष्ट्रीय उन्नति।
८ सप्त व्याहृतियाँ।
९ वैदिक राष्ट्रगीत।
१० वैदिक राष्ट्रशासन।
११ वेदोंका अध्ययन और अध्यापन।
१२ वेदका श्रीमद्भागवतमें दर्शन।
१३ प्रजापति संस्थाद्वारा राज्यशासन।
१४ त्रैत, द्वैत, अद्वैत और एकत्वके सिद्धान्त।
१५ क्या यह संपूर्ण विश्व मिथ्या है?
१६ ऋषियोंने वेदोंका संरक्षण किस तरह किया?
१७ वेदके संरक्षण और प्रचारके लिये आपने क्या किया है?
१८ देवत्व प्राप्त करनेका अनुष्ठान।
१९ जनताका हित करनेका कर्तव्य।
२० मानवके दिव्य देहकी सार्थकता।
२१ ऋषियोंके तपसे राष्ट्रका निर्माण।
२२ मानवके अन्दरकी श्रेष्ठ शक्ति।
२३ वेदमें दर्शाये विविध प्रकारके राज्यशासन।
२४ ऋषियोंके राज्यशासनका आदर्श।
२५ वैदिक समयकी राज्यशासन व्यवस्था।
२६ रक्षकोंके राक्षस।
२७ अपना मन शिवसंकल्प करनेवाला हो।
२८ मनका प्रचण्ड वेग।
२९ वेदकी दैवत संहिता और वैदिक सुभाषितोंका विषयवार संग्रह।
३० वैदिक समयकी सेनाव्यवस्था।
३१ वैदिक समयके सैन्यकी शिक्षा और रचना।
३२ वैदिक देवताओंकी व्यवस्था।
३३ वेदमें नगरोंकी और वनोंकी संरक्षण व्यवस्था।
३४ अपने शरीरमें देवताओंका निवास।
३५, ३६, ३७ वैदिक राज्यशासनमें आरोग्य-मन्त्रीके कार्य और व्यवहार।
३८ वेदोंके ऋषियोंके नाम और उनका महत्त्व।
३९ रुद्र देवताका परिचय।
४० रुद्र देवताका स्वरूप।
४१ उषा देवताका परिचय।
४२ आदित्योंके कार्य और उनकी लोकसेवा।
४३ विश्वेदेवा देवताका परिचय।
४४ वेदमंत्रोंका भाव समझनेमें प्राचीन ऋषियोंका दृष्टिकोन।
४५ पुरुषमें ब्रह्मदर्शन।
४६ वेदभाष्योंका तुलनात्मक अनुशीलन।
४७ वेद हमारे धर्मकी पुस्तक है।
४८ एक मन्त्रके अनेक अर्थ।

आगे व्याख्यान प्रकाशित होते जांयगे। प्रत्येक व्याख्यानका मूल्य ।≈) छः आने रहेगा। प्रत्येकका डा. व्य. ≈) दो आना रहेगा। दस व्याख्यानोंका एक पुस्तक सजिल्द लेना हो तो उस सजिल्द पुस्तकका मूल्य ५) होगा और डा. व्य. १।।) होगा।

मंत्री — स्वाध्यायमण्डल, पोस्ट- 'स्वाध्यायमण्डल (पारडी)' पारडी [जि. सूरत]

मुद्रक और प्रकाशक- व. श्री. सातवळेकर, भारत-मुद्रणालय, पोस्ट- 'स्वाध्याय-मंडल (पारडी)' पारडी [जि. सूरत]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu